Skill India
कौशल भारत-कुशल भारत

PMKVY
प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना

ASCI
Agriculture Skill Council of India

N·S·D·C
National Skill Development Corporation

जैविक कृषि पुस्तकमाला-II

जैविक प्रशिक्षण पुस्तिका

(QP-AGR/Q1201)

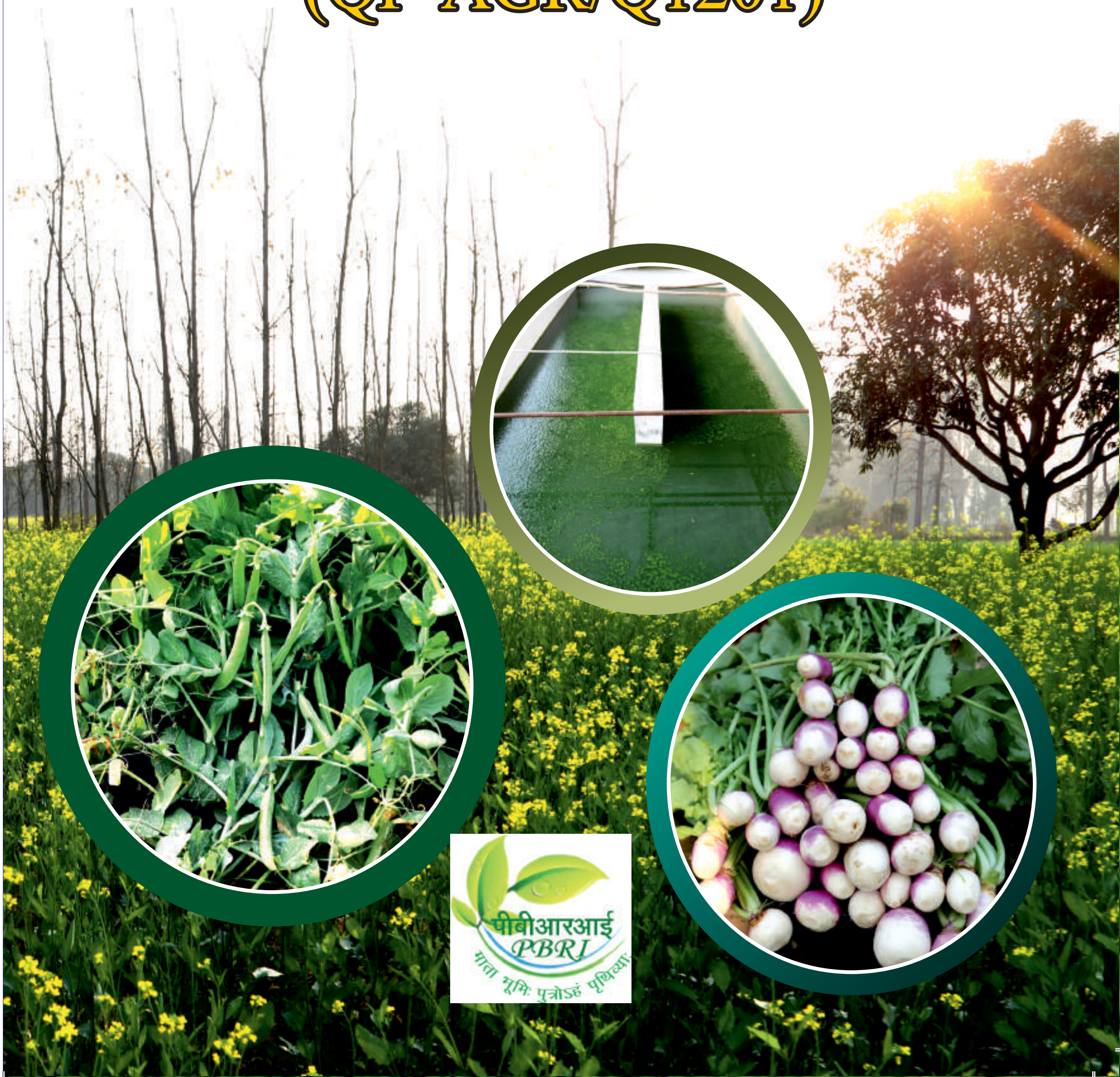

विषय सूची

क्र.सं.	अध्याय	पृष्ठ सं.
I	प्रस्तावना	I
II	अभिस्वीकृति	II
1	जैविक खेती (एजीआर/एन 1201)	1-5
2	फसल चक्र (एजीआर/एन 1201)	6-7
3	जैविक खेती के बीज का चुनाव एवं बीजोपचार (एजीआर/एन 1202)	8
4	पोषक तत्वों का प्रबन्धन (एजीआर/एन 1203)	9-20
5	सिंचाई प्रबन्धन (एजीआर/एन 1205)	21-24
6	खरपतवार–नियन्त्रण (एजीआर/एन 1204)	25-26
7	जैविक खेती के तहत एकीकृत नाशी जीव और रोग प्रबन्धन (एजीआर/एन 1206)	27-31
8	फसल कटाई (एजीआर/एन 1207)	32
9	जैविक प्रमाणन एवं गुणवत्ता आश्वासन (एजीआर/एन 1208)	33-37
10	जैविक खेती एक व्यवसाय (एजीआर/एन 1209)	38-40

प्रस्तावना

जैविक उत्पादन के लिए यह पुस्तिका योग्यता पैक (क्वालिफिकेशन पैक-क्यूपी-ए जी आर/क्यू १२०१) की तैयारी के लिए एक उत्कृष्ट माध्यम है। जैविक कृषि करने वाले कृषक पूर्णतया प्रमाणिकता को स्थापित कर राष्ट्र के विकास में भागीदार भी है, आज बढ़ते जा रहे रसायनो के प्रयोग से प्रकृति की असीम क्षमताओं में गिरावट आती जा रही है, यह जैविक उत्पादन पुस्तिका कृषक भाइयों को पारिस्थितिकी के पुनरूद्धार के लिए अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी।

जैविक खेती वह सदाबहार पारंपरिक कृषि पद्धति है, जो भूमि का प्राकृतिक स्वरूप बनाने वाली क्षमता को बढ़ाती है। जैविक खेती किसानों के स्वावलम्बन की अभिनव योजना है। इसका मुख्य उदेश्य किसानों की आय को दोगुना कर जैविक खेती का प्रशिक्षण, प्रोत्साहन, तथा देश में किसानों को स्वावलम्बी बनाना है। जैविक खेती पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान है।

पुस्तिका के सन्दर्भ में

जैविक खेती: जैविक खेती कृषि की वह विधा है जिसमें मृदा को स्वस्थ्य व जीवंत रखते हुए केवल जैव अवशिष्ट, जैविक खाद तथा जीवाणु क्रियाशीलता के प्रयोग से प्रकृति के साथ समन्वय रख कर टिकाऊ फसल उत्पादन किया जाता है।

फसल चक्र: भूमि की उर्वरता को बनाये रखने के उद्देश्य से मिश्रित खेती, कीटों को आकर्षित करने वाली फसलें, रिले फसल के माध्यम से भूमि की भौतिक, रासायनिक स्थितियों में संतुलन स्थापित करना है।

जैविक खेती के लिए बीज का चुनाव एवं बीजोपचार: बीज गैर-आनुवांशिक संशोधित और एक समान आकार के एवं देशी व स्थायी बीज जो स्वस्थ होने चाहिए तथा बीजोपचार के लिए बीजामृत, ट्राईकोडर्मा, स्यूडोमोनास इत्यादि का प्रयोग किया जाना चाहिए।

मृदा पोषक तत्वों का प्रबंधन: बायोफर्टिलाइजर, पंचगव्य, राइजोबियम, ट्राईकाडर्मा, हरी खाद, एजोला, कम्पोस्ट खाद, वर्मीकम्पोस्ट, आदि पोषक तत्वों के प्रबंधन में सहायक है।

सिंचाई प्रबंधन: उन्नत सिंचाई विधियों का उपयोग जैसे: बूंद-बूंद सिंचाई (टपका), फव्वारा सिंचाई, इत्यादि।

खरपतवार नियंत्रण: जुताई, मल्चिंग तथा मशीनी उपकरणों के माध्यम से खरपतवार का नियंत्रण करना।

एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन: इसके द्वारा फसलों पर आयी व्याधियों से निपटने हेतु सही विधि का प्रयोग करना।

जैविक प्रमाणीकरण एवं गुणवता आश्वासन: यह जैविक खाद्य की बढती हुई मांग में गुणवत्ता सुनिश्चित करने एवं धोखाधडी एवं बेईमानी रोकने में सहायक है।

जैविक खेती एक व्यवसाय: देश एवं विदेश में बढते हुए जैविक उत्पाद की मांग के कारण जैविक खेती का भविष्य उज्जवल है।

जैविक खेती के माध्यम से प्राकृतिक संतुलन, मृदा स्वास्थ्य एवं खेती को विषमुक्त बनाये रखने के लिए परम श्रद्धेय आचार्य जी एवं पतंजलि बायो रिसर्च सेंटर के वैज्ञानिको के साथ कृतसंकल्पित हैं।

अभिस्वीकृति

परम श्रद्धेय स्वामी रामदेव जी एवं परम पूज्य आचार्य बालकृष्ण जी के मार्गदर्शन में पतंजलि बायो रिसर्च इंस्टीटयूट (PBRI) भारत सरकार के महत्वकांक्षी प्रधनमंत्री कौशल विकाश योजना (PMKVY) के अंर्तगत एवं उद्यमिता मंत्रालय भारत सरकार (Ministry of Skil Development and Entrepreneurship) के अंर्तगत कार्यरत राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (National Skill Development Corporation-NSDC) के प्रति आभार प्रकट करते हैं।

हम भारतीय कृषि कौशल परिषद (Agriculture Skill Council of India-ASCI) का आभार प्रकट करते हैं, जिन्होंने जैविक उत्पादक के लिए इस पुस्तिका की संकल्पना एवं विकास में निरंतर प्रोत्साहन देकर अधिक उपयोगी बनाने में सहयोग दिया।

हम पी.बी.आर.आई. की टीम के सभी सदस्यों मुख्यत: श्री राजेश आनंद (वाईस प्रेसीडेंट), श्री पवन कुमार (चीफ जनरल मैनेजर), डा. अशोक मेहता (डायरेक्टर), डा. रविन्द्र बाबु (डायरेक्टर), डा. ऋषि कुमार वर्मा, (जनरल मैनेजर), श्री विवेक बेनीपुरी (जनरल मैनेजर), डा. रामकुमार शुक्ला (जनरल मैनेजर), डा. पूजा शाह (मैनेजर), डा. धर्मेश वर्मा, डा. जे.एल. दिवेदी, श्री पुष्पेन्द्र यादव, श्री जुझार सिंह नागर, श्री तरूण शर्मा, श्री विभोर जैन, श्री प्राशु शर्मा, साध्वी देव शरण्या, श्री शूरवीर सिंह, श्री दीपक वशिष्ठ एवं श्री सौरभ कुमार सैनी के आभारी है जिन्होंने समय पर इस पुस्तिका को तैयार करने में सहयोग दिया।

हम उन सभी व्यक्तियों के आभारी हैं जिन्होंने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से इस जैविक उत्पादक के लिए पुस्तिका में सहयोग दिया है

पतंजलि बायो रिसर्च इंस्टिट्यूट
हरिद्वार

तकनीकी समन्वय

ICAR	BARC	ICAR-IIHR	IARI
उत्पादन तकनीक	जैविक कार्बन परीक्षण तकनीक	बायो डीकपोजर उत्पादन तकनीक	जैव कीटनाशक उत्पादन तकनीक

मान्यता प्राप्त

USOCA NPOP/NAB/0011	JAS-ANZ An ISO 9001:2015 Registered	Skill India कौशल भारत-कुशल भारत
प्रमाणित कृषि उत्पाद	ISO प्रमाणित	जैविक कृषि प्रशिक्षण

DSIR RECOGNIZED	CIBRC CENTRAL INSECTICIDES BOARD & REGISTRATION COMMITTEE	STARTUP INDIA STAND UP INDIA
DSIR अनुसंधानात्मक पंजीकृत	CIB & RC जैव कीटनाशक पंजीकृत	स्टार्टअप इण्डिया में पंजीकृत

हमारे पेटेन्ट उत्पाद

1) जैविक प्रोम

2) जैविक पोषक

3) जैविक सूभूमि

4) धरती का चौकीदार

5) जैविक खाद

5) जैविक क्रांति

6) धरती का डाक्टर
(मृदा परीक्षण किट)

7) मोबाइल ऐप
(मृदा परीक्षण किट के परिणाम
के साथ उर्वरक संस्तुति)

जैविक खेती (एजीआर/N1201)

जैविक खेती कृषि की वह विधा है, जिसमें मृदा को स्वस्थ व जीवन्त रखते हुए केवल जैव अवशिष्ट, जैविक या जीवाणु खाद के प्रयोग से प्रकृति के साथ समन्वय रखकर टिकाऊ फसल का उत्पादन किया जाता है।

विश्व खाद्य संगठन के अनुसार जैविक खेती एक ऐसी अनूठी कृषि–प्रबन्धन की प्रक्रिया है, जो कृषि के वातावरण का स्वास्थ्य, जैव विविधता, जैविक चक्र तथा मिट्टी की जैविक प्रणालियों का संरक्षण व पोषण करते हुए उत्पादन सुनिश्चित करती है। इस प्रक्रिया में किसी भी प्रकार के संश्लेषित तथा रासायनिक आदानों के उपयोग के लिए कोई स्थान नहीं है।

जैविक खेती एवं रासायनिक खेती में अन्तर:

विवरण	जैविक खेती	रासायनिक खेती
उत्पादन की लागत	समग्ररूप से कम।	समग्ररूप से अधिक।
उर्वरक	रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग नहीं।	रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग।
कीटनाशक	रासायनिक कीटनाशकों का बिल्कुल प्रयोग नहीं।	रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग
बीज	थोड़े से महँगे पर उत्पादन की कुल लागत का एक छोटा भाग होता है।	अपेक्षाकृत महँगे।
श्रम	श्रमिकों की अधिक जरूरत।	मशीनों से खेती, इसलिए श्रमिकों की कम जरूरत।
उत्पादकता	अपेक्षाकृत अधिक या समय बीतने के साथ समान।	समय बीतने के साथ गिरावट आती है।
किसानों की आय	उत्पादन की कम लागत, इसलिए आय वृद्धि अपेक्षाकृत अधिक।	उत्पादन की अधिक लागत और कम आय होना।
उपभोक्ताओं के लिए मूल्य	अपेक्षाकृत थोड़े महँगे होते है।	सस्ते, पर स्वास्थ्य–सम्बन्धी समस्याएँ होती हैं और पर्यावरण में असंतुलन से जीवन की समग्र लागत में वृद्धि।

जैविक खेती के सिद्धान्त :

1. प्रकृति की धरोहर है।
2. प्रत्येक जीव के लिए मृदा ही स्रोत है।
3. हमें मृदा को पोषण देना है, न कि पौधे को, जिसे हम उगाना चाहते हैं।
4. ऊर्जा प्राप्त कराने वाली लागत में पूर्ण स्वतन्त्रता।
5. पारिस्थितिकी का पुनरुद्धार।

जैविक खेती का महत्त्वः

1. भूमि की उर्वरा शक्ति में टिकाऊपन।
2. जैविक खेती प्रदूषण से रहित।
3. कम पानी की आवश्यकता।
4. पशुओं का अधिक महत्त्व।
5. फसल–अवशेषों को खपाने की समस्या नहीं।
6. अच्छी गुणवत्ता की पैदावार।
7. कृषि–मित्र जीव सुरक्षित एवं संख्या में बढ़ोतरी।
8. स्वास्थ्य में सुधार।
9. कम लागत।
10. अधिक लाभ।

बीजोपचारः

जैविक खेती में निम्न तरह से बीजोपचार कर सकते हैं:

- 50 से.ग्रे. तापक्रम पर 20–30 मिनट तक गर्म जल–उपचार।
- गोमूत्र अथवा गोमूत्र–दीमक का टीला, मृदा–पेस्ट।
- बीजामृत 50 ग्रा.गाय का गोबर + 50 मि.ली. गोमूत्र + 50 मि.ली. गाय का दूध + 2–3 ग्रा. चूना, एक लीटर पानी में मिलाकर पूरी रात रखते हैं। इससे बीजोपचार करते है।
- हींग ; ोंविमजपकंद्ध 250 ग्रा. / 10 कि.ग्रा. बीज की दर से।
- हल्दी पाउडर गोमूत्र में मिलाकर भी बीजोपचार के हेतु प्रयोग किया जा सकता है।
- पंचगव्य सत।
- दशपर्णी सत।
- ट्राईकोडर्मा विरीडी (04 ग्रा. / कि.ग्रा बीज) या स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स (10 ग्रा. / 1कि.ग्रा. बीज)।
- जैव उर्वरक (राईजोबियम / एजोटोबैक्टर + पी.एस.बी.)।

विभिन्न प्रकार की सुरक्षित खेती–विधियाँ और उनकी विशेषताएँः

उचित कृषि क्रियाएँ (जी.ए.पी पद्धति) प्राथमिक उत्पादन स्तर पर कीटनाशकों के अवशेषों, पशु–चिकित्सा, एण्टीबायोटिक की दवा के अवशेषों, धातु–अवशेषों, अफ्लाटॉक्सिन–अवशेषों, सूक्ष्मजीव विज्ञानी प्रदूषक जैसे दूषित पदार्थों को खाद्य श्रृंखला में प्रवेश करने की सम्भावनाओं को समाप्त करके सुरक्षित कृषि उपज और भोजन के उत्पादन में मदद करता है। उचित कृषि–क्रियाएँ ;जी.ए.पी. के तहत निम्नलिखित विधियों का पालन किया जाता है। उचित कृषि–क्रियाओं ;ळ ।च्द्ध के तहत निम्नलिखित विधियों का पालन किया जाता है।

- मिट्टी की प्रजनन क्षमता और विविधता को बढ़ाने के लिए उचित फसलों के फसल–चक्र को अपनाना।
- आवरण / कवर फसलों का रोपण।
- टिलेज को कम करना या हटाना।
- एकीकृत कीट प्रबन्धन (आई.पी.एम.) लागू करना।
- पशुधन और फसलों को एकीकृत करना।
- कृषि वानिकी प्रथाओं को अपनाने से।
- जैविक खेती में लागत एवं राजस्व का दायरा
- जैविक खेती में भूमि की तैयारी, बीजों की बुवाई, खरपतवार–नियन्त्रण, फसल बीमारियों की रोकथाम इत्यादि का नियन्त्रण जैव उर्वरकों, मित्र–कीटों एवं सूक्ष्म–जीवाणुओं द्वारा किया जाता है।
- जैविक खेती में उपयोग किए जानेवाले सभी आदान सस्ते एवं आसानी से उपलब्ध होते हैं।

★ जैविक खेती से लाभ के रूप में खेत में विषैले पदार्थों का विघटन होता है, मृदा की स्थिति में सुधार होता है फलस्वरूप हमें स्वस्थ एवं गुणवत्तायुक्त फसल प्राप्त होती है, जिसका बाजार मूल्य भी अधिक होता है।

जैविक पद्धति के द्वारा जैविक कीट एवं व्याधि–नियन्त्रण :

जैविक कीट एवं व्याधि–नियन्त्रण इस प्रकार हैं :

1. **गोमूत्र** : गोमूत्र काँच की शीशी में भरकर धूप में रख सकते हैं। जितना पुराना गोमूत्र होगा, उतना ही अधिक प्रभावशाली होगा। 12–15 मि.मी. गोमूत्र प्रति लीटर पानी में मिलाकर स्प्रेयर पम्प से फसलों में बुआई के 15 दिन बाद प्रत्येक 10 दिन में छिड़काव करने से फसलों में रोग एवं कीड़ों की प्रतिरोधी क्षमता विकसित होती है, जिससे प्रकोप की सम्भावना कम रहती है।

2. **नीम के उत्पाद** : नीम भारतीय मूल का पौधा है, जिसे समूल ही वैद्य के रूप में मान्यता प्राप्त है। इससे मनुष्य के लिए उपयोगी औषधियाँ तैयार की जाती हैं तथा इसके उत्पाद फसल–संरक्षण के लिये अत्यन्त उपयोगी हैं।

3. **नीम–पत्ती का घोल** : नीम की 10–12 किलों पत्तियाँ 200 लीटर पानी में 4 दिन तक भिगोएं। पानी हरा–पीला होने पर इसे छानकर एक एकड़ की फसल पर छिड़काव करने से इल्ली की रोकथाम होती है। इस औषधि की तीव्रता को बढ़ाने के हेतु बेशरम, धतूरा, तम्बाकू आदि के पत्तों को मिलाकर काढ़ा बनाने से औषधि की तीव्रता बढ़ जाती है और यह दवा कई प्रकार के कीड़ों को नष्ट करने में उपयोगी सिद्ध हुई है।

4. **नीम की निम्बोली** : नीम की निम्बोली 2 किलो लेकर महीन पीस लें, इसमें 2 लीटर ताजा गोमूत्र मिला लें। इसमें 10 किलो छाछ मिलाकर 4 दिन रखें और 200 लीटर पानी मिलाकर खेतों में फसल पर छिड़काव करें।

5. **नीम की खली** : जमीन में दीमक तथा व्हाइट ग्रब एवं अन्य कीटों की इल्लियाँ तथा प्यूपा को नष्ट करने तथा भूमि–जनित रोग विल्ट आदि की रोकथाम के लिये इसका प्रयोग किया जा सकता है। 6–8 क्विंटल प्रति एकड़ की दर से अन्तिम जुताई करते समय कूटकर बारीक करके खेत में मिलावें।

6. **आइपोमिया (बेशरम) पत्ती–घोल** : बेशरम/आइपोमिया की 10–12 किलो पत्तियाँ, 200 लीटर पानी में 4 दिन तक भिगोएं। पत्तियों का अर्क उतरने पर इसे छानकर एक एकड़ की फसल पर छिड़काव करें। इससे कीटों का नियन्त्रण होता है।

7. **मट्ठा** : मट्ठा, छाछ, दही आदि नाम से जाना जानेवाला तत्त्व मनुष्य के लिए अनेक प्रकार से गुणकारी है और इसका उपयोग फसलों में कीट–व्याधि के उपचार के लिये लाभप्रद है। मिर्ची, टमाटर आदि जिन फसलों में चुर्रामुर्रा या कुकड़ा रोग आता है, उसकी रोकथाम के हेतु एक मटके में छाछ डालकर उसका मुँह पॉलिथीन से बाँध दें एवं 30–45 दिन तक उसे मिट्टी में गाड़ दें। इसके पश्चात् छिड़काव करने से कीट एवं रोगों से बचाव होता है। 100–150 मि.ली. छाछ 15 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से कीट–व्याधि का नियन्त्रण होता है। यह उपचार सस्ता, सुलभ, लाभकारी होने से कृषकों में लोकप्रिय है।

8. **मिर्च/लहसुन** : आधा किलो हरी मिर्च, आधा किलो लहसुन पीसकर चटनी बनाकर पानी में घोल बनाएं। इसे छानकर 100 लीटर पानी में घोलकर फसल पर छिड़काव करें। 100 ग्राम साबुन पाउडर भी मिलावें, जिससे पौधों पर घोल चिपक सके। इसके छिड़काव करने से कीटों का नियन्त्रण होता है।

9. **लकड़ी की राख** : 1 किलो राख में 10 मि.ली. मिट्टी का तेल डालकर पाउडर का छिड़काव 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से करने पर एफिड्स एवं पम्पकिन बीटल का नियन्त्रण हो जाता है।

10. **ट्राईकोडर्मा**: ट्राईकोडर्मा एक ऐसा जैविक फफूँदीनाशक है, जो पौधों में मृदा एवं बीजजनित बीमारियों को नियन्त्रित करता है। बीजोपचार में 5–6 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपयोग किया जाता है। मृदा–उपचार में 1 किलोग्राम ट्राईकोडर्मा को 100 किलोग्राम अच्छी सड़ी हुई खाद में मिलाकर अन्तिम बखरनी के समय प्रयोग करें। कटिंग् व जड़ोपचार के लिए 200 ग्राम ट्राईकोडर्मा को 15–20 लीटर पानी में मिलाएं और इस घोल में 10 मिनट तक रोपण करनेवाले पौधों की जड़ों एवं कटिंग को उपचारित करें। 3 ग्राम ट्राईकोडर्मा का 1 लीटर पानी में घोल बनाकर 10–15 दिन के अन्तर पर खड़ी फसल पर 3–4 बार छिड़काव करने से वायुजनित रोगों का नियन्त्रण होता है।

इल्ली–नियन्त्रण

1. एक लीटर देशी गाय के मट्ठे में 5 किलो नीम के पत्ते डालकर 10 दिन तक सड़ाएं। बाद में नीम की पत्तियों को निचोड़ लें। इस नीमयुक्त मिश्रण को छानकर 150 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ की दर से समानरूप से फसल पर छिड़काव करें। इससे इल्ली व माहू का प्रभावी नियन्त्रण होता है।
2. 5 लीटर मट्ठे में 1 किलो नीम के पत्ते व धतूरे के पत्ते डालकर 10 दिन सड़ने दें। इसके बाद मिश्रण को छानकर इल्लियों का नियन्त्रण करें।
3. 5 किलो नीम के पत्ते 3 लीटर पानी में डालकर उबाल लें। जब आधा रह जावे, तब उसे छानकर 150 लीटर पानी में घोल तैयार करें। इस मिश्रण में 2 लीटर गोमूत्र मिलाए। अब यह मिश्रण एक एकड़ की दर से फसल पर छिडकें।
4. 1/2 किलो हरी मिर्च व लहसुन पीसकर 150 लीटर पानी में डालकर छान लें तथा एक एकड़ में इस घोल का छिड़काव करें।
5. मारूदाना, तुलसी (श्यामा) तथा गेंदे के पौधे फसल के बीच में लगाने से इल्ली का नियन्त्रण होता है।
6. टिन की बनी चकरी खेतों में लगाने से भी इल्लियाँ गिर जाती हैं।

उखठा (डम्पिंग ऑफ–नियन्त्रण) :

1. एक लीटर मट्ठे में चने के आकार के 3 हींग के टुकड़े मिलाकर उससे चने का बीजोपचार कर, तत्पश्चात् बोएं। सोयाबीन, उड़द , मूँग एवं मसूर के बीजों को अधिक गीला न करें।
2. 400 ग्राम नीम के तेल में 100 ग्राम कपड़े धोनवाला पाउडर डालकर खूब फेटें, फिर इस मिश्रण में 150 लीटर पानी डालकर घोल बनावें। यह एक एकड़ के लिए पर्याप्त है।

भूमि का रासायनिक खेती से जैविक खेती में चरणबद्ध परिवर्तन :

पहले चरण में रासायनिक पदार्थों एवं कीटनाशकों का उपयोग बन्द किया जाता है एवं इनकी जगह जैव उर्वरकों को बढ़ावा दिया जाता है, दूसरे एवं तीसरे चरण को भी इसी क्रम में पूरा किया जाता है। जैविक खेती के इन चरणों में भूमि में विषैले एवं हानिकारक पदार्थों को नष्ट करके भूमि की स्थिति को सुधारा जाता है।

जैविक खेती में बहु–फसल :

व्यवहार्य फसल पोर्ट फोलियो बनाने के हेतु प्रभावी ढंग से बहु फसल परियोजनाओं को लागू करना। जैविक खेती में मृदा के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए बहुफसलीय परियोजनाओं को प्रभावी ढंग से लागू किया जाता है, जैसे दलहन वाली फसलों से नत्रजन का स्थिरीकरण होता है, जो कि अन्य फसलों को भी फायदा पहुँचाता है। फसल–चक्र में मुख्य फसल के साथ एवं ग्रीष्म् ऋतु में हरी खाद वाली फसलें भी लगायीं जा सकती हैं, जिससे मृदा की भौतिक एवं रासायनिक संरचना में सुधार होता है।

मौसम आधारित फसल–योजना :

जैविक खेती में फसलों पर मौसमी तनाव के कारण फसल–अवधि में फसल कई प्रकार से प्रभावित हो सकती है, जैसे तेज हवा, मूसलाधार वर्षा, अकाल आदि।

फसल–चक्र के लिए उपयुक्त फसल का चुनाव उस स्थान की जलवायवीय परिस्थितियों एवं मृदा के प्रकार के आधार पर किया जाता है। उदाहरण के लिए जैसे राजस्थान के हाडोती क्षेत्र में खरीफ मौसम में सोयाबीन/उड़द एवं रबी में गेहूँ/जौ/सरसों लगाए जाते हैं।

वार्षिक योजना, जैविक खेती योजना की तैयारी, फसल कैलेण्डर की तैयारी :

मौसम	खरीफ	पतझड़	रबी	वसन्त	ग्रीष्म ऋतु
माह	मई–जून	अक्टूबर–फरवरी	अक्टूबर–नवम्बर	फरवरी–अप्रैल	अप्रैल–जून
फसलें	धान, बाजरा, सोयाबीन, उड़द, कपास ज्वार, मूँग, सब्जियाँ।	गन्ना।	गेहूँ, जौ, सरसों, तिल, लहसुन, प्याज, धान सब्जिया, पत्तागोभी, फूलगोभी, ब्रोकली, आलू, टमाटर, मिर्च।	कुकुरबिटेसी कुल की सब्जियाँ गन्ना	गहरी प्रजाति मृदा सौरकरण–मूँग उड़द, हरी खाद, ढैंचा, सनई।

***

फसल-चक्र (एजीआर/N1201)

किसी निश्चित क्षेत्र पर निश्चित अवधि के लिए भूमि की उर्वरता को बनाये रखने के उद्देश्य से फसलों को अदल–बदलकर उगाने की क्रिया को फसल चक्र कहते हैं। इसका उद्देश्य पौधों के भोज्य तत्वों का सदुपयोग तथा भूमि की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशाओं में सन्तुलन स्थापित करना है।

फसल–चक्र के लाभ :

- ✶ भूमि के पी.एच. तथा क्षारीयता में सुधार होता है।
- ✶ भूमि की संरचना में सुधार होता है।
- ✶ मृदाक्षरण की रोकथाम होती है।
- ✶ फसलों का बीमारियों से बचाव होता है।
- ✶ कीटों का नियन्त्रण होता है।
- ✶ खरपतवारों की रोकथाम होती है।
- ✶ वर्षभर आय प्राप्त होती रहती है।
- ✶ भूमि में विषाक्त पदार्थ एकत्र नही होते हैं।
- ✶ उर्वरक–अवशेषों का पूर्ण उपयोग हो जाता है।
- ✶ सीमित सिंचाई सुविधा का समुचित उपयोग हो जाता है।

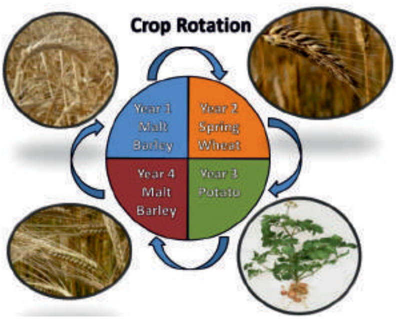

दलहन–खाद्यान्न व खाद्यान्न–दलहन फसल–चक्र मिट्टी में जीवाणुओं की संख्या को बढ़ाता है। फसल–चक्र में दलहनी फसल अपनाने से नाइट्रोजन उर्वरक की बचत होती है, क्योंकि इसकी जड़ो में गाँठें होती हैं, जो वातावरण से नाइट्रोजन सोखकर फसलों को देती हैं।

मिश्रित खेती:

एक ही खेत में, एक साथ दो या दो से अधिक फसलों को उगाना ही मिश्रित खेती कहलाता है, जैसे कि गेहूँ एवं मटर या गेहूँ एवं सरसों या मूंगफली एवं सूरजमुखी मिश्रित खेती। इस पक्ति में बीज मिलाकर खेत में छिडकते हैं या अलग अलग पंक्तियों में बोते हैं, क्योंकि इनके पकने व काटने का समय अलग–अलग होता है। जब फसलों के उत्पादन के साथ–साथ पशुपालन भी किया जाता है, तो इसे मिश्रित कृषि या मिश्रित खेती कहते हैं अथवा फसलोत्पादन के साथ–साथ जब पशुपालन भी आय का श्रोत हो तो ऐसी खेती को मिश्रित खेती कहते हैं। मिश्रित खेती से मतलब एक साथ खेत में कई फसले उगाना है।

मिश्रित खेती के लाभ:

- ✶ मिश्रित खेती से साल भर खाद्य सुरक्षा बनी रहती है।
- ✶ कम बारिश, ज्यादा बारिश, सूखा और कम पानी की स्थिति में यह खेती उपयुक्त है।
- ✶ मिश्रित खेती अपनाकर किसान प्रति इकाई भूमि से अधिक उत्पादन ले सकते हैं।
- ✶ इसे अपनाने से अधिक आमदनी के साथ–साथ भूमि की उर्वरा शक्ति भी बरकरार रहती है, साथ ही साथ रोग व्याधियों का प्रकोप भी कम हो जाता है।
- ✶ यदि कोई फसल मौसम की असामान्यता के कारण नष्ट हो जाए, तब भी दूसरी या तीसरी फसल बच सकती है और इस प्रकार उस खेत से लाभ प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही साथ रोग व्याधियों का प्रकोप भी कम हो जाता है।

जाल फसल के लाभः

- ✶ किसानों को श्रम और लागत में बचत होती है।
- ✶ मुख्य फसल में कीट व बीमारियों का आक्रमण नहीं होता है।
- ✶ किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।
- ✶ मुख्य फसल के उत्पादन में बढ़ोतरी होती है।
- ✶ कीटनाशक व फंफूदीनाशक दवाइयों में लगने वाली लागत कम हो जाती है।
- ✶ किसानों की जोखिम क्षमता कम हो जाती है।
- ✶ मृदा की उर्वरता में बढ़ोतरी होती है।
- ✶ मुख्य फसल व जाल फसल से किसान के शुद्ध लाभ में वृद्धि होती है।
- ✶ साथ ही साथ रोग व्याधियों का प्रकोप भी कम हो जाता है।

जाल / फन्दा फसलः

जाल फसल मुख्य फसल को कीटों व बीमारियों से बचाती है। यह कीटों को आकर्षित करती है, जैसे कपास की फसल के साथ भिंडी की बुवाई करना, जिससे कीट भिंडी की फसल पर आक्रमण करते है, टमाटर की फसल में गेंदे की फसल कीटों को आकर्षित करती हैं आदि।

रिले क्रॉपिंगः

इसमें पूर्ववर्ती फसल के काटने से पहले ही आगामी फसल को लगा दिया जाता है उदाहरण–धान के खेत में धान पकने से पहले अलसी की बुवाई करना, अदरक के खेत में मेथी की बुवाई करना आदि।

रिले क्रॉपिंग के लाभ

- ✶ एक ही समय में 3–4 फसलें ले सकते हैं।
- ✶ श्रम और लागत में बचत होती है।
- ✶ खाद व पानी की बचत होती है।
- ✶ किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।
- ✶ एक फसल से दूसरी फसल के पोषक तत्त्व की पूर्ति होती है।
- ✶ मृदाक्षरण की रोकथाम होती है।
- ✶ साथ ही साथ रोग व्याधियों का प्रकोप भी कम हो जाता है।

✻ ✻ ✻

जैविक खेती के लिए बीज का चुनाव एवं बीजोपचार (एजीआर/N1202)

बीज का चुनाव :

- ✶ जैविक खेती में चयनित सभी बीज एक समान आकार के, गैर–अनुवांशिक संशोधित होने चाहिए, सभी प्रकार के संक्रमण से रहित होने चाहिए।
- ✶ बीज (किस्म) का चुनाव करते समय यह ध्यान रखें कि बीज उस क्षेत्र की जलवायु की परिस्थितियों, क्षेत्रीय कीटों एवं बीमारियों के लिए प्रतिरोधक हों।

जैविक बीजोपचारः

- ✶ जैविक बीजोपचार करने के लिए निम्न चीजें चाहिए– बायो–उत्पाद, बायो–फर्टिलाइज बायो–पेस्टिसाइड जैसे–एजोटोबेक्टर, राइजोबियम कल्चर, स्यूडोमोनास इत्यादि।
- ✶ खेत पर तैयार किये गए फसल–संरक्षण के उत्पाद जैसे–बीजामृत इत्यादि।

जैविक खेती में फसल बुवाई एवं प्रतिरोपण की विधियाँ :

- ✶ ग्रीष्म ऋतु में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए, जिससे कि फसल की बीमारियों के रोगवाहक कीटों के लार्वा इत्यादि नष्ट हो जाएं।
- ✶ फसलों की बुवाई के समय कतार से कतार एवं पौधे से पौधे की दूरी एक समान होनी चाहिए।
- ✶ जड़ वाली फसलों को मेड़ो पर लगाना चाहिए।
- ✶ प्रामाणिक जैविक बीज खरीद के लिए विक्रेताओं की पहचान करें।
- ✶ यदि बीज फार्म पर उपलब्ध नहीं हैं, तो अधिकृत जैविक बीज विक्रेता की पहचान कर के ही प्रमाणित बीज खरीदें।

स्वीकार्य रासायनिक विकल्प, उनकी खरीद एवं उपयोगः

- ✶ बायोफर्टिलाइजर यथा–ट्राईकोडर्मा, स्यूडोमोनास, बीजामृत, दशामृत, पंचगव्य इत्यादि का प्रयोग किया जाता है।
- ✶ स्वीकार्य रासायनिक विकल्प जैसे पौधे की जड़ से प्राप्त रसायन इत्यादि

भूमि तैयार करने से लेकर कटाई तक शुरु होने वाली नर्सरी और फील्ड प्रक्रियाओं की योजना और आयोजनः

जैविक खेती में भूमि की तैयारी, नर्सरी में बीजों की बुवाई एवं अन्य कर्षण–क्रियाओं का कार्य समय पर क्रियान्वित किया जाना चाहिए। इसमें यह ध्यान रखना चाहिए कि खेत की तैयारी से लेकर फसल की कटाई तक फसल किसी भी तरह संक्रमित न हो।

पोषक तत्त्वों का प्रबन्धन (एजीआर/N1203)

जैविक खेती के अन्तर्गत मिट्टी के पोषक तत्त्वों का प्रबन्धनः

मृदा–उर्वरता से तात्पर्य उसकी उस क्षमता से है, जो पौधे की वृद्धि और विकास के लिए सभी आवश्यक पोषक तत्त्वों को संतुलित मात्रा व उपलब्ध अवस्था में आपूर्ति कर सके, साथ ही मृदा किसी दुष्प्रभाव या विषैले प्रभाव से पूर्णतया मुक्त हो।

मृदा–उर्वरता सामान्यतः मिट्टी के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों पर निर्भर करती है।

मृदा–परीक्षणः

संतुलित खादों के प्रयोग का आधार मिट्टी का परीक्षण ही है। खादों की उचित मात्रा का उचित समय पर उचित विधि के द्वारा प्रयोग करते हुए अधिकतम उपज प्राप्त की जा सके, यही मिट्टी की जाँच का उद्देश्य है।

मृदा नमूना लेने का सही समयः

प्रत्येक फसल की बुवाई/रोपाई के पूर्व सूखे खेत से मृदा का नमूना लिया जाना चाहिए।

मृदा–नमूना लेने की विधिः

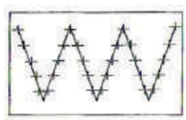

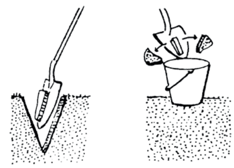

- जिस खेत से नमूना लेना हो, उसमें जिग–जैग प्रकार से घूमकर 10–15 स्थानों पर निशान लगा लें, जिससे खेत के सभी हिस्से उसमे शामिल हो जावें।
- घूमे हुए स्थानों पर उपरी सतह से घास–फूंस कूड़ा करकट आदि हटा दें।
- इन सभी स्थानों पर 15 सेमी. (6 इन्च) गहरा (V) के आकार का गड्ढा खोदें। गड्ढे को साफ कर खुरपी से एक तरफ उपर से नीचे तक 2–3 सेमी. मिट्टी की तह को निकाल लें तथा साफ बाल्टी में डाल लें।
- एकत्रित की गई पूरी मिट्टी को हाथ से अच्छी तरह मिला लें तथा साफ कपड़े पर डालकर गोल ढेर बना लें। अब अंगुली से ढेर को चार बराबर भागों मे काट दें एवं आमने–सामने के दो भागों की मिट्टी वापस अच्छी तरह से मिला ले। यह प्रक्रिया तब तक दोहराए जब तक लगभग आधा किलो मिट्टी शेष रह जाए। यही प्रतिनिधि नमूना होगा।
- सूखी मिट्टी के नमूने को साफ कपड़े की थैली में डाल दें तथा नमूने के साथ एक सूचना पत्रक, जिस पर समस्त जानकारी लिखी हो– कपड़े की थैली में अन्दर एवं बाहर बाँध दें।
- तैयार नमूनों को मिट्टी के परीक्षण–हेतु प्रयोगशाला में भेजें। किसान निम्न जानकारी लिखा हुआ सूचना पत्रक नमूनों के साथ रखें एवं ऊपर बांधे। 1. किसान का नाम 2. पिता का नाम 3. ग्राम/विकासखण्ड/तहसील 4. खेत का खसरा नं./पहचान 5. जिला 6. सिंचित/असिंचित 7. पहले ली गई फसल 8. पहले फसल में दी गई उर्वरक की किस्म एवं मात्रा 9. मिट्टी–संबन्धी अन्य समस्या।

मिट्टी का नमूना लेते समय सावधानियाँ :

- मेंढ के नजदीक और पेड़ों के पास से नमूना न लें।
- जहाँ पानी अधिकतर भरा रहता हो, वहाँ से नमूना न लें।
- नमूना सूखे खेत से लें।
- जहाँ पर गोबर या अन्य खाद आदि डाली गयी हो, वहाँ से नमूने न लें।

मिट्टी की उपरी सतह में सक्रियण माइक्रोबियल गतिविधि बढ़ाने के विभिन्न तरीके :

- हरी खाद और अतिरिक्त गोबर की खाद (एफ.वाई.एम.) से कार्बनिक पदार्थ में सुधार होगा और मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की गतिविधि में वृद्धि होगी।
- मिट्टी में सूक्ष्म जीवाणुओं को मिलाए जैसे पी.एस.बी., पी.एम.बी., जेड.एस.बी., ट्राईकोडर्मा, स्यूडोमोनास, एजेटोबेक्टर, राइजोबियम, मायकोराइजा आदि।

मिट्टी की जाँच के आधार पर भूमि की उर्वरता :

पोषक तत्त्व	उपलब्ध पोषक तत्त्व की मात्रा (कि./हे.)		
	न्यून	**मध्यम**	**अधिक**
नाइट्रोजन	280 से कम	280–560	560 से अधिक
फॉस्फोरस	10 से कम	10–25	25 से अधिक
पोटाश	110 से कम	110–280	280 से अधिक
जैविक कार्बन	0.5 प्रतिशत से कम	0.5–0.75 प्रतिशत	0.75 प्रतिशत से अधिक

जीवाणु–खाद के लाभ :

- ये जीवाणु फसलों के पोषक तत्त्वों की जरूरत को पूरा कर उनका उत्पादन व उत्पादकता बढ़ाते हैं।
- ये सूक्ष्म जीवाणु मृदा में मौजूद फास्फोरस को घुलनशील बनाकर पौधों के लिए उपलब्धता बढ़ाते हैं।
- ये सूक्ष्म जीव कुछ मात्रा में सूक्ष्म आवश्यक पोषक तत्त्वों जैसे जिंक, तांबा, सल्फर, लोहा, बोरोन, कोबाल्ट व मोलिब्डेनम इत्यादि पौधों को प्रदान करते हैं।
- ये सूक्ष्म जीवाणु खेती में बचे हुए कार्बनिक अपशिष्टों को सड़ाकर मृदा में कार्बनिक पदार्थ की उचित मात्रा बनाए रखते हैं।
- ये सूक्ष्म जीवाणु पादप–वृद्धि करने वाले हारमोन्स, प्रोटीन, विटामिन एवं अमीनो अम्ल का उत्पादन करते हैं तथा यह सूक्ष्म जीवाणु मृदा में पनप रही रोगजनक फफूँद नष्ट कर लाभकारी जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि करते हैं।
- इन जीवाणुओं के प्रयोग से लगभग 15–30 प्रतिशत फसलोत्पादन बढ़ता है और उत्पाद की गुणवत्ता बहुत अच्छी रहती है।
- इन सूक्ष्म जीवाणुओं के प्रयोग से मृदा की जलधारण शक्ति व उर्वरा शक्ति बढ़ती है, जिससे फसलोत्पादन बढ़ता है।
- ये जीवाणु–खाद प्रत्येक मौसम में प्रति फसल लगभग 20 से 30 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर तथा फास्फोरस को घुलनशील बनाने वाले जीवाणु प्रति हैक्टेयर लगभग 30 से 40 किलोग्राम फास्फोरस प्रति फसल उपलब्ध कराते हैं।

मृदा–परीक्षण :

- मृदा–परीक्षण क्यों?
- मिट्टी में उपलब्ध पोषक तत्त्वों के बारे में पता करने के हेतु मिट्टी का परीक्षण किया जाता है।
- भूमि में उपलब्ध पोषक तत्त्वों और लवणों की मात्रा और पी.एच.मान का पता करने के लिए।
- भूमि की भौतिक बनावट जानने के लिए।

- ✶ जो फसल हम बोने जा रहे हैं, उसमें खाद की मात्रा निर्धारित करने हेतु।
- ✶ समस्याग्रस्त भूमि में किसी भूमि–सुधारक रसायन, जैसे ऊसर भूमि के लिए जिप्सम, फॉस्पोजिप्सम या पाइराईट्स और अम्लीय भूमि में चूने की आवश्यकता है या नहीं? यदि है तो किसी भूमि सुधारक की कितनी मात्रा डालनी चाहिए?

मृदा–संसोधनः

सफल कृषि उत्पादन के लिए लवणीय, क्षारीय व अम्लीय मृदाओं का सुधार आवश्यक है।

लवणीय भूमि का सुधारः

- ✶ भूमि समतलीकरण, मेड़बन्दी या सिंचाई जलभराव करके घुलनशील लवणों का निक्षालन करें।
- ✶ मृदा–जाँच के आधार पर क्षारीय भूमि में जिप्सम, सल्फर व केल्साइट का प्रयोग करें।
- ✶ हरी खादवाली फसलों, जैसे ढैंचा, सनई व लोबिया भी क्षारीय भूमि को सुधारने में उपयोगी सिद्ध हुई हैं।

अम्लीय भूमि का सुधारः

मृदा पीएच के अनुसार चूने की मात्रा का प्रयोग करें।

जैव उर्वरकः

जैव उर्वरक वह उत्पाद है, जिसमें जीवित सूक्ष्म जीव होते हैं, जो मिट्टी की उत्पादकता में वृद्धि के लिए नाइट्रोजन स्थिरीकरण (फिक्सेशन), फॉस्फोरस घुलनशीलता (सोल्यूबिलाइजेशन), वृद्धि हार्मोन–उत्पादन, सेलूलोज–विघटन इत्यादि के मामले में कृषि में उपयोगी होते हैं।

नाइट्रोजन जैव उर्वरकः

- ✶ राईजोबियम
- ✶ ऐजेटोबेक्टर
- ✶ ऐजोस्पिरिलियम
- ✶ नील हरित शैवाल
- ✶ एजोला

राईजोबियमः

- ✶ वायुवीय मिट्टी के बैक्टीरिया, फलीदार फसलों की जड़ों के साथ सहजीवी संबन्ध (सिंबियोटिक एसोसिएशन) से नाइट्रोजन को स्थिर करता है।
- ✶ यह 20–200 किलो नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष स्थिर करता है।
- ✶ 1–2 किलो प्रति हेक्टेयर मिट्टी के उपचार एवं 20 ग्राम प्रति किग्रा बीजोपचार के लिए।

एजेटोबेक्टोर एवं ऐजोस्पिरिलियमः

- ✶ ये एक स्वतन्त्र या मुक्तरूप से भूमि में रहने वाले जीवित व नाइट्रोजन को उपलब्ध कराने वाले बैक्टीरिया हैं।
- ✶ ये 20–40 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन स्थिर करते हैं।
- ✶ अनाज और बागवानी फसलों के लिए इसकी अनुशंसा की जाती है।
- ✶ इनका उपयोग बीजोपचार, पौंधा–उपचार या मृदोपचार हेतु किया जाता है।

* इनका बीजोपचार में 200 ग्राम प्रति10 किलोग्राम बीज, 1.5–3.0 किलो प्रति हेक्टेयर, पौंध–उपचार 4–5 किलो प्रति हेक्टेयर मृदा उपचार के अनुसार उपयोग किया जा सकता है।

नील हरित शैवाल :

* नील हरित काई एक जैविक खाद है।
* मुख्य नील हरित शैवाल नोस्टॉक–एनाबीना, औलोसीरा, कोलोथ्रिक्स आदि।
* ये चावलों में 25–30 किलो प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन प्रदान कर सकती है।
* धान में 25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से डाला जाता है।

एजोला :

* एजोला एक ताजा पानी का फर्न है और ये एनाबीना के सहयोग से नाइट्रोजन को स्थिर करता है।
* ये 25–40 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की दर से स्थिर करता है।

फॉस्फोरस घुलनशील जैव उर्वरक (पीएसबी) :

* पी.एस.बी. बैक्टीरिया एवं कवक से तैयार किया जाता है। ये अघुलनशील फार्स्फेट को घुलनशील फॉस्फेट में बदलता है।
* पी.एस.बी. बैक्टीरिया में बैसिलस मेगाथारीयम वारी–फॉस्फेटिकम, बैसिलस पोलीम्यक्सा, स्यूडोमोनास स्ट्रैट आदि शामिल हैं।
* सभी फसलों के उपयोग के लिए बीजोपचार, पौध उपचार या मिट्टी के उपचार के लिए, इसके उपयोग की अनुशंसा की जाती है। फॉस्फोरस मोबिलाइजिंग बायो–फर्टिलाइजर (पी.एम.बी.):
* मायकोरईजा जैसे वेम (VAM)

फसल चक्र :

फसल–चक्र किसी निश्चित क्षेत्र पर एक निश्चित अवधि तक फसलों को इस प्रकार हेर–फेर कर बोना, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाए रखकर अधिक उत्पादन ले सकें, उदाहरण मक्का, गेहूँ, मूंग, मक्का, आलू, मूंग आदि।

फसल–चक्र के सिद्धान्त :

* गहरी जड़ों वाली फसल के बाद उथली जड़ों वाली फसल उगाना।
* अधिक खाद चाहने वाली फसलों के बाद कम खाद चाहने वाली फसलें बोना।
* अधिक पानी चाहने वाली फसलों के बाद कम पानी चाहने वाली फसलें बोना।
* फलीदर फसलों के बाद बिना फलीदार फसलें बोना। फसल–चक्र में फसलें एक ही कुल की नहीं होनी चाहिए।
* फसल–चक्र में कृषि साधनों का वर्षभर क्षमतापूर्ण उपयोग।

फसल–चक्र के लाभ :

* मृदा की उर्वरता में वृद्धि।
* अधिक उत्पादकता।
* कीटों पर नियन्त्रण।
* मृदा–संरचना का विकास।

- परिवार को रोजगार।
- उत्पादों का उचित मूल्य।
- न्यून प्रतिस्पर्धा।

फसल–अवशेष :
- अधिकांश फसलें अवशेषों की एक बड़ी मात्रा का उत्पादन करती हैं भूसे, डण्ठल, भूसी आदि।
- नाइट्रोजन की मात्रा इन अवशेषों में 1.7–3.30 के बीच उपलब्ध रहती है।
- मिट्टी में फसल–अवशेषों को मिलाने से मिट्टी की उत्पादकता, पोषक तत्त्वों की आपूर्ति और माइक्रोबियल गतिविधियों में सुधार होता है।
- खेत में फसल–अवशेष की मात्रा 2.5–5.0 टन प्रति हेक्टेयर देनी चाहिए।

हरी खाद :
- दलहनी और गैर दलहनी फसलों के फूल आने के समय ट्रेक्टर से खेत में मिला देने या दबा देने से सड़ने पर जो खाद बनती है, उसी को हरी खाद कहते हैं।
- हरी खाद 50–60 दिनों में 1.5–2 टन/एकड़ शुष्क बायोमास और 35–40 किलो नाइट्रोजन प्रदान कर सकती है।
- हरी खाद मिट्टी में सूक्ष्म जीवाणुओं (माइक्रोबियल) की गतिविधि को तेज करती है, खरपतवार–वृद्धि को कम करती है और पौधों की रोग–प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाती है।

हरी खाद के गुण :
- शीघ्र वृद्धि करने की क्षमता हो, जिससे न्यूनतम समय में कार्य पूर्ण हो सके।
- चयन की गई दलहनी फसल में अधिकतम वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करने की क्षमता होनी चाहिये, जिससे जमीन को अधिक से अधिक नाइट्रोजन उपलब्ध हो सके।
- फसल की वृद्धि होने पर अतिशीघ्र अधिक से अधिक मात्राा में पत्तियां व कोमल शाखाएं निकल सके, जिससे प्रति इकाई क्षेत्र से अत्यधिक हरा पदार्थ मिल सके तथा आसानी से सड़ सके।
- फसल गहरी जड़ वाली हो, जिससे वह भूमि में गहराई तक जाकर अधिक से अधिक पोषक तत्वों को खींच सके। हरी खाद की फसल के सड़नें पर उसमें उपलब्ध सारे पोषक तत्व मिट्टी की ऊपरी सतह पर रह जाते हैं, जिनका उपयोग बाद में बोई जाने वाली मुख्य फसल के द्वारा किया जाता है।
- फसल के वानस्पतिक भाग मुलायम हो जाने चाहिए।
- फसल की जल व पोषक तत्वों की मांग कम से कम होनी चाहिए।
- चयनित फसल पर रोग एवं कीट कम लगते हों और बीजोत्पादन की क्षमता अधिक हो।

हरी खाद के लिए अनुकूल फसलें:
- दलहनी फसलें जैसे ढैंचा, जूट, लोबिया, उर्द, मूँग, ग्वार, बरसीम, खेसारी एवं सनई आदि।
- गैर फलीदार फसलें जैसे भांग, ज्वार, मक्का, सूरजमुखी एवं एजोला आदि।

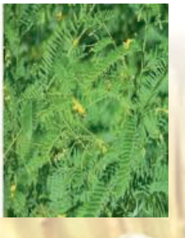

हरी खाद के द्वारा नाइट्रोजन की मात्रा				
फसल उत्पादन (टन/हे.) प्रतिशतता	उगाने का मौसम किग्रा/हे	हरे पदार्थ का औसत पर नाइट्रोजन की	हरे भाग के आधार नाइट्रोजन की मात्रा	मृदा में मिलाई गई
ढैचा	खरीफ	14.4	0.42	77.10
सनई	खरीफ	15.2	0.43	84.0
मूंग	खरीफ	5.7	0.53	38.6
लोबिया	खरीफ	10.8	0.49	56.3
ग्वार	खरीफ	14.4	0.34	62.3
सैंजी	रबी	20.6	0.51	134.0
खेसारी	रबी	8.8	0.54	60.7

गोबर की खादः

गोबर की खाद पशुओं जैसे गाय, भैंस एवं बकरी आदि के ठोस तथा द्रव मल–मूत्र, विभिन्न पोषक पदार्थों जैसे बिछावन, भूसा, पुआल, पेड़ पौधों की पत्तियां आदि को मिलाकर तैयार किया जाता है। गोबर की खाद (एफ. वाई. एम) में लगभग 5–6 किलो नाइट्रोजन, 1.2–2.0 किलो फास्फोरस और 5–6 किलो पोटाश प्रति टन होता है।

गोबर की खाद तैयार करनाः

1. इन्दौर–विधि : यह विधि ए. हॉवर्ड तथा यशवंत डी. वाड के द्वारा इन्दौर में 1924 से 1931 के मध्य विकसित की गई थी, इस कारण इसको इन्दौर–विधि कहते हैं।

विधि :

1. गढ़ढे का आकार गढ़ढे की लम्बाई 10 फीट, चौड़ाई 5–7 फीट तथा गहराई 2–3 फीट रखते हैं।
2. कम्पोस्ट बनाने के लिए आवश्यक सामग्री।

अ. पशुओं की गोबर बिछावन सहित।

ब. पशुओं के मूत्र से सोखी हुई मिट्टी।

स. पौधों व फसल के अवशेष, खरपतवार, पेड़ की पत्तियाँ, लकड़ी की राख, धान की चूरी आदि का मिश्रण।

3. गड्ढा भरने की विधि : पहली परत में पशुशाला से इकट्ठे किये गये कचरे की मोटी परत 3 इंच तक बना देते हैं। इसके ऊपर लकड़ी की राख को फैला देते हैं। इसके ऊपर 2 इंच मोटी गोबर की परत बिछाकर उसके ऊपर हल्की मिट्टी की परत बिखेर देते हैं। पूरी सामग्री को गीला करने के लिए पर्याप्त मात्रा में पानी डाल देना चाहिये। इस प्रकार परत के बाद परत लगाते हुए गड्ढे को भरते हैं। गड्ढे को तब तक भरते रहते हैं जब तक पूरी सामग्री की परत ज़मीन से एक फुट ऊपर तक न हो जाए। अन्त में बिछावन के साथ राख तथा पशुमूत्र की एक परत लगानी चाहिए। सुबह–शाम पानी का छिड़काव करें। इस प्रकार कूड़े–करकट तथा गोबर के द्वारा प्रचुर मात्रा में पानी सोख लिया जाता है तथा इसका सड़ना प्रारम्भ हो जाता है। इस विधि में 3 महीने बाद अच्छी कम्पोस्ट तैयार हो जाती है।

2. नेडेप कम्पोस्टः यह विधि श्री नारायण देवराव पण्ढ़री पाण्डे, जिला यवतमाल, महाराष्ट्र के द्वारा विकसित की गयी। इस विधि में निम्न सामग्री काम में ली जाती है :

1. फार्म अवशेष, अपशिष्ट, कम्पोस्ट बनाने के लिए आवश्यक सामग्री कपास व अरहर के डँठल,
2. पेड़ की पत्तियाँ आदि करीब 1400–1500 किलो।
3. पशुओं की गोबर 90–100 किलो।
4. पानी मौसम के अनुसार।

इस विधि में पशुओं के गोबर का कम प्रयोग किया जाता है।

इस विधि में वायुवीय प्रक्रियाँ द्वारा कार्बनिक पदार्थों का विघटन होता है तथा कम्पोस्ट तैयार होने में 90–120 दिन का समय लगता है।

इस विधि के कम्पोस्ट में नाइट्रोजन 0.5–1.5 प्रतिशत, 0.5–1.0 प्रतिशत फॉस्फोरस व 1.2–1.4 प्रतिशत पोटाश होता है।

नेडेप कम्पोस्ट टेंक:

ईंट या पत्थर आदि से जमीन के ऊपर टेंक बनाया जाता है। टेंक का आकार आयताकार होता है, जिसके अन्दर की लम्बाई 10 फीट, चौड़ाई 6 फीट तथा ऊँचाई 3 फीट रखते है। टेंक की दीवार 9 इंच मोटी होनी चाहिए। हवा के आवागमन के लिए टेंक की चारों दीवारों में 7 इंच के छेद छोड़ने चाहिए। इस प्रकार तीसरी, छठी तथा नवीं परत में छेद रखते हैं। टेंक के अन्दर व बाहर की दीवारों और फर्श को टेंक भरने से पूर्व गोबर व मिट्टी के मिश्रण से भली प्रकार लेप देना चाहिए।

टेंक भरने की विधि:

टेंक भरने से पूर्व गोबर के घोल का छिड़काव टेंक के नीचे तथा दीवारों के अन्दर कर लेना चाहिए।

प्रथम परत– पहली परत फार्म के वानस्पतिक अवशेषों से भर देना चाहिए।

दूसरी परत– गोबर या गोबर की लेई (करीब 5 किलोगोबर को 100 ली. पानी में घोल) का पहली परत पर एक सार छिड़काव करते हैं।

तीसरी परत– इस परत में 30–40 किलो साफ सूखी छनी मिट्टी गोबर की परत पर इकसार बिछा देते हैं तथा इसके ऊपर पानी का छिड़काव कर गीला कर लेते हैं। इस प्रकार के तीनों क्रमों में टेंक में परत बनाते रहते हैं, जब तक ढेर टेंक की दीवारों से 1.5 फीट ऊपर तक न आ जाए। साधारणतया 11–12 परत में टेंक भर जाता है।

टेंक के ऊपरी भाग को झोपड़ीनुमा आकार दे देते हैं। टेंक भरने के बाद ढक देते हैं। टेंक के ढेर में दरार न पड़े, क्योंकि दरारों से गैस निकलती रहती है, इसलिये इसके ऊपर पुनः लेपन करतें है।

इस विधि से कम्पोस्ट बनाने में 3–4 माह का समय लगता है। कम्पोस्ट में 15–20 प्रतिशत नमी बनाए रखने के लिए गोबर व पानी के घोल का छिड़काव करें, जिससे खाद में आवश्यक पोषक तत्त्व संरक्षित रह सकें।

साधारणतया एक टेंक से 3 टन के करीब कम्पोस्ट प्राप्त होता है।

कम्पोस्ट के प्रयोग की विधि:

सिफारिस के अनुसार (सामान्यतया फसलों में 10–12 टन प्रति हेक्टेयर व सब्जियों में 15–20 टन प्रति हेक्टेयर) कम्पोस्ट की मात्रा को बुवाई के 3–4 सप्ताह पूर्व खेत में डालकर, हल चलाकर मिट्टी में भली–भाँति मिला देना चाहिए।

वर्मी कम्पोस्ट:

केंचुओं के द्वारा अवशिष्ट जैसे गोबर, वनस्पतियों एवं भोजन के कचरे आदि को खाकर/पचाकर छोटी–छोटी गोलियों में बदलने को ही केंचुआ–खाद अथवा वर्मी कम्पोस्ट कहा जाता है। इसके उपयोग से फसलें कीट व व्याधियों के प्रति अधिक प्रतिरोधी हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त वर्मी कम्पोस्ट में सूक्ष्म तत्व सन्तुलित मात्रा में तथा एंजाइम व विटामिन भी पाए जाते हैं।

वर्मी कम्पोस्ट के उत्पादन की विधि :

वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए ऐसे स्थान का चुनाव करते हैं, जो ऊँचा तथा छायादार हो। छाया न होने की स्थिति में वर्मी बेड के ऊपर छप्पर डालकर छाया करनी चाहिए, क्योंकि केचुओं को अधिक प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती है।

केंचुऐ अन्धेरे में अधिक क्रियाशील रहते हैं। वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए बेड की लम्बाई 40–50 फीट और चौड़ाई 3–4 फीट रखते हैं। जिसमें 2 फीट ऊँचाई तक 10–15 दिन पुराना गोबर भरते हैं तथा लगभग 150 केंचुऐ छोड़ देते हैं। गोबर के ऊपर 5–10 सेमी पुआल या सूखी पत्तियाँ डाल दें। इस इकाई में बराबर 20–25 दिन तक पानी का छिड़काव करें। इसमें 40 प्रतिशत नमी को बनाए रखने की आवश्यकता होती है। 40–45 दिन बाद वर्मी कम्पोस्ट बन जाए, तो 2 से 3 दिन तक पानी का छिड़काव बंद कर दें। जब खाद पकी हुई चाय की पत्ती की तरह दिखे तो खाद तैयार समझें।

वर्मी कम्पोस्ट के लाभ :

- केंचुआ खाद के प्रयोग से सिंचाई में बचत होती है।
- केंचुआ खाद मृदा के पी. एच. को सन्तुलित करता है।
- वर्मी कम्पोस्ट मृदा में सूक्ष्म जीवाणुओं को सक्रिय कर पौधों की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने वाले पोषक तत्त्व को पौधों को उपलब्ध करवाता है। जिससे फसल–उत्पादन में वृद्धि होती है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में वर्मी कम्पोस्ट के उत्पादन से रोजगार की सम्भावनाएं भी उपलब्ध हो सकेंगी।

बेड से खाद निकालना :

तैयार खाद को पिट से एक तरफ एकत्र कर दें तथा दूसरी ओर फिर से नया गोबर भर दें। ऐसा करने से तैयार कम्पोस्ट के सभी केंचुऐं नये गोबर मे चले जाएँगे। खाद को पिट से निकाल कर छाया में ढेर लगा दें और हल्का सूखने के बाद 2 मिमी. चौड़े छिद्रों वाली छलनी से छान लें। छनी हुई खाद को बोरी में भर कर रख लें। इस तैयार खाद में 20–25 प्रतिशत नमी होनी चाहिए। खाद को ऐसी जगह स्टोर करें जहाँ सूख न सके।

सावधानियाँ:

- गड्ढे में लकड़ी, चीड की पत्ती का प्रयोग न करें।
- गड्ढे में प्लास्टर न करें।
- केंचुओं को चीटियों से बचाने के लिए समय–समय पर गड्ढे के चारों ओर जैव कीटनाशक का प्रयोग करें।
- केंचुऐं की उचित प्रजाति का चयन करना चाहिए।
- गड्ढे को हमेशा सूर्य के प्रकाश से बचाना चाहिए, इसलिए गड्ढे के उपर घास–फूस का छप्पर बना कर छाया करनी चाहिए।

वर्मी कम्पोस्ट के पोषक :

देश के विभिन्न शोध–संस्थानों में किए गए परीक्षणों के अनुसार वर्मी कम्पोस्ट में 1.25 से 2.5 प्रतिशत नाइट्रोजन, 1.6–1.8 प्रतिशत फॉस्फोरस व 1.0–1.5 प्रतिशत पोटाश होता है। वर्मी कम्पोस्ट का पी. एच. मान 7–7.8 तथा इसमें कार्बन नत्रजन का अनुपात 12:1 होता है। वर्मी कम्पोस्ट में उपरोक्त तत्त्व घुलनशील अवस्था में रहते हैं।

वर्मीवाश :

वर्मीवाश एक तरल पदार्थ है, जो केंचुओं के द्वारा स्त्रावित हार्मोन्स व मलमूत्र से बनता है। यह पोषक तत्त्वों एवं एंजाइमयुक्त होता है, जिसमें रोगरोधक गुण पाए जाते हैं। इसके प्रयोग से पच्चीस प्रतिशत तक उत्पादन बढ़ जाता है। वर्मीवाश की प्रकृति गोमूत्र की तरह तीव्र है, अतः कम से कम 20 लीटर पानी में 1 लीटर वर्मीवाश मिलाकर ही उसका छिडकाव करें।

वर्मीवाश कैसे बनाएँ :

जिस तरह केंचुओं का मल (विष्ठा) खाद रूप में उपयोगी है, उसी तरह इसका मूत्र भी तरल खाद के रूप में बहुत प्रभावकारक होता है। केंचुओं के मूत्र को इकट्ठा करने की एक विशेष पद्धति होती है, जिसे वर्मीवाश कहते हैं। वर्मीवाश बनाने के लिए 40 लीटर की प्लास्टिक की बाल्टी अथवा केन लेकर उसे निम्न प्रकार से भरा जाता है। बाल्टी में नीचे एक छोटा छेद करते हैं, जिससे वर्मीवाश एकत्र किया जाता है।

1. ईंट के छोटे–छोटे टुकड़े या छोटे–छोटे पत्थर 5 इंच तक के।
2. रेत मोटी बालू–2 इंच का थर।
3. मिट्टी–3 इंच का थर।
4. पुराना खाद/गोबर 9–12 इंच का परत।
5. घास का आवरण 1–1.5 इंच का थर।

इस तरह बाल्टी को भरकर उसमें करीब 200 से 300 केचुए छोड़ देते हैं। वर्मीवाश की बाल्टी छायादार जगह में रखी जाती है। रोज इसमें हल्का–हल्का पानी छिड़कते रहना चाहिए। 30 दिनों तक बाल्टी के नीचे के छिद्र को अस्थाई रूप से बंद कर दिया जाता है। 30 दिन वेफ बाद इस छिद्र को खोलकर उसके नीचे एक बरतन रखा जाता है जिसमें वर्मीवाश एकत्र होता है। वर्मीवाश की बाल्टी में 4–4 घंटे के अंतर पर दिन में करीब 4 से 5 बार हल्के–हल्के पानी का छिड़काव किया जाता है। बाल्टी के छिद्र के नीचे के साफ बर्तन मे बूंद–बूंद पानी एकत्र होता रहेगा।

केंचुआ–खाद के प्रयोग की मात्रा :

केंचुआ–खाद की मात्रा हर फसल में अलग–अलग होती है, जिस का विवरण निम्नलिखित है :

फसल	केंचुआ खाद की मात्रा प्रति एकड़
धान्य फसलें	2 टन
दालें	2 टन
तिलहनी फसलें	3–5 टन
मसालों की फसलें	4 टन ;2–10 किलोग्राम/पौधा
शाकीय फसलें	4–6 टन
फलदार वृक्ष	2–3 किलोग्राम/ वृक्ष
नकदी फसलें	5 टन
शोभाकारी फसलें	4 टन
प्लांटेशन फसलें	5 किलोग्राम/ पौधा

(**स्त्रोतः राधा डी. काले,** 2003)

कुदरती खेती

प्राकृतिक खेती में हम प्राकृतिक विधि से बने स्प्रे और खाद का उपयोग करते हैं। ये गाय के गोबर और जड़ी बूटी जैसे कार्बनिक कचरे का उपयोग करके तैयार किए जाते हैं, जिनमें विशेष गुण होते हैं, जो उनमें एकत्रित या संग्रहीत जीवन उर्जा का शोषण करते हैं। ये ऊर्जा पृथ्वी, पानी, वायु, आग और ब्रह्माण्ड से प्राप्त होती है।

जीवामृत (एक एकड़ खेत के लिए)

आवश्यक सामग्री

1. 10 किलोग्राम देशी गाय का गोबर।
2. 5 से 10 लीटर गोमूत्र।
3. 2 किलोग्राम गुड या फलों के गूदों की चटनी।
4. 2 किलोग्राम बेसन (चना, उड़द, मूंग)।
5. 200 लीटर पानी।
6. 50 ग्राम मिट्टी।

बनाने की विधि :

सर्वप्रथम कोई प्लास्टिक की टंकी या सीमेंट की टंकी लें फिर उस पर 200 ली. पानी ड़ालें। पानी में 10 किलोग्राम गाय का गोबर व 5 से 10 लीटर गोमूत्र एवं 2 किलोग्राम गुड़ या फलों के गूदों की चटनी मिलाएँ। इसके बाद 2 किलोग्राम बेसन, 50 ग्राम मेड़ की मिट्टी या जंगल की मिट्टी डालें और सभी को डण्डे से मिलाए। इसके बाद प्लास्टिक की टंकी या सीमेंट की टंकी को जालीदार कपड़े से बंद कर दे। 48 घण्टे में चार बार डण्डे से चलाए और यह 48 घंटे बाद तैयार हो जाएगा।

प्रयोग–अवधि :

इस जीवामृत का प्रयोग केवल सात दिनों तक कर सकते हैं।

सावधानियाँ :

* प्लास्टिक व सीमेंट की टंकी को छाया में रखें, जहाँ पर धूप न लगे।
* गोमूत्र को धातु के बर्तन में न रखें।
* छाया में रखा हुआ गोबर ही प्रयोग करें।

पंचगव्य (एक एकड़ खेत के लिए)

पंचगव्य का अर्थ है पंच+गव्य (गाय से प्राप्त पाँच पदार्थों का घोल) अर्थात् गोमूत्र, गोबर, दूध, दही और घी के मिश्रण से बनाए जानेवाले पदार्थ को पंचगव्य कहते हैं। प्राचीन समय में इसका उपयोग खेती की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के साथ पौधों में रोग–प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए किया जाता था।

पंचगव्य बनाने की विधि :

प्रथम दिन 2.5 कि.ग्रा. गोबर व 1.5 लीटर गोमूत्र में 250 ग्राम देशी घी अच्छी तरह मिलाकर मटके में डाल दें व ढक्कन अच्छी तरह से बंद कर दें। अगले तीन दिन तक इसे रोज हाथ से हिलाएं। अब चौथे दिन सारी सामग्री को आपस में मिलाकर मटके में डाल दें व फिर से ढक्कन बंद कर दें। अगले दिन इसे लकड़ी से हिलाने की प्रक्रिया शुरू करें और सात दिन तक प्रतिदिन दोहराएँ। इसके बाद जब इसका खमीर बन जाए और खुशबू आने लगे, तो समझ लें कि पंचगव्य तैयार है। इसके विपरीत अगर खटास भरी बदबू आए, तो हिलाने की प्रक्रिया एक सप्ताह और बढ़ा दें। इस तरह पंचगव्य तैयार होता है अब 10 ली. पानी में 250 ग्रा. पंचगव्य मिलाकर किसी भी फसल में किसी भी समय उपयोग कर सकते हैं। अब इसे बीमारियों से रोकथाम, कीटनाशक के रूप में व वृद्धि कारक उत्प्रेरक के रूप में उपयोग कर सकते हैं। इसे एक बार बना कर 6 माह तक उपयोग कर सकते हैं। इसको बनाने की लागत 70 रु. प्रति लीटर आती है।

उपयोग की विधि :

1. पंचगव्य का उपयोग अनाज व दालों (धान, गेहूँ, मण्डुवा, राजमा आदि) तथा सब्जियों (शिमला मिर्च, टमाटर, गोभी वर्गीय व कन्दवाली) फसलों में किया जाता है।
2. छिड़काव के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी आवश्यक है।
3. बीजोपचार से लेकर फसल कटाई के 25 दिन पहले तक 25 से 30 दिन के अन्तराल में इसका उपयोग किया जा सकता है।
4. प्रति बीघा 5 ली. पंचगव्य 200 ली. पानी में मिलाकर पौधों के तनों के पास छिड़काव करें।

बीजोपचार :

1. 1 लीटर पंचगव्य के घोल में 500 ग्राम वर्मी कम्पोस्ट मिलाकर बीजों पर छिड़काव करें और उसकी हल्की परत बीज पर चढ़ाएं व 30 मिनट तक छाया में सुखाकर बुआई करें।

पौध के लिए :

1. पौधशाला से पौध निकालकर घोल में डुबाएं और रोपाई करें।
2. पौधारोपण या बुआई के पश्चात् 15–25 दिन के अन्तराल पर 3 बार लगातार छिड़काव करें।

सावधानियाँ :

1. पंचगव्य का उपयोग करते समय खेत में नमी का होना आवश्यक है।
2. एक खेत का पानी दूसरे खेतों में नहीं जाना चाहिए।
3. इसका छिड़काव सुबह 10 बजे से पहले तथा शाम 3 बजे के बाद करना चाहिए।
4. पंचगव्य मिश्रण को हमेशा छायादार व ठण्डे स्थान पर रखना चाहिए।
5. इसको बनाने के 6 माह तक इसका प्रयोग अधिक प्रभावशाली रहता है।
6. टीन, स्टील व ताम्बा के बर्तन में इस मिश्रण को नहीं रखना चाहिए। इसके साथ रासायनिक कीटनाशक व खाद का उपयोग नहीं करना चाहिए।

घनजीवामृत (एक एकड़ खेत के लिए)

आवश्यक सामग्री :

1. 100 किलोग्राम गाय का गोबर।
2. 1 किलोग्राम गुड़ या फलों के गूदे की चटनी।
3. 2 किलोग्राम बेसन (चना, उड़द, अरहर, मूंग)।
4. 50 ग्राम मेड़ या जंगल की मिट्टी।
5. 1 लीटर गौमूत्र।

बनाने की विधि :

सर्वप्रथम 100 किलोग्राम गाय के गोबर को किसी पक्के फर्श व पोलीथीन पर फेलाए, फिर इसके बाद 1 किलो. गुड़ या फलों के गूदों की चटनी व 1 किलो. बेसन को डालें। इसके बाद 50 ग्राम मेढ या जंगल की मिट्टी डालकर तथा 1 ली. गोमूत्र, सभी सामग्री को फावड़ा से मिलाए फिर 48 घण्टे छायादार स्थान पर एकत्र कर या थापीया बनाकर जूट के बोरे से ढक दें। 48 घंटे बाद उसको छाया में सुखाकर, चूर्ण बनाकर भण्डारण करें।

प्रयोगावधि :

इसका प्रयोग छः माह तक कर सकते हैं।

सावधानियाँ :

1. सात दिन छाया में रखे हुए गोबर का प्रयोग करें।
2. गोमूत्र किसी धातु के बर्तन में न रखें।

छिड़कावः

एक बार खेत जुताई के बाद घनजीवामृत का छिड़काव कर खेत तैयार करें।

आवश्यक सामग्री : घनजीवामृत

गोमूत्र	1.5 ली. (देशी गाय)
गोबर	2.5 कि.ग्रा
दही	1 कि.ग्रा
दूध	1 ली.
देशी घी	520 ग्राम
गुड़	500 ग्राम
सिरका	1 ली.
केला	6 नग
कच्चा नारियल	2 नग
पानी	10 लीटर
प्लास्टिक का पात्र/मटका	1 नग

मटका–खाद :

मटका–खाद बनाने की विधि :

देशी गाय का 10 लीटर गोमूत्र, 10 किलोग्राम ताजा गोबर, आधा किलोग्राम गुड़, आधा किलो चने का बेसन सभी को मिलाकर 1 बड़े मटके में भरकर 5–7 दिन तक सड़ाएं, इससे उत्तम जीवाणुकल्चर तैयार होता है। मटका खाद को 200 लीटर पानी में घोलकर किसी भी फसल में गीली या नमीयुक्त जमीन में फसलों की कतारों के बीच में अच्छी तरह से प्रति एकड़ छिड़काव करें। हर 15 दिन बाद इस क्रिया को दोहराएं। इस तरह फसल भी अच्छी होगी, पैदावार भी बढ़ेगी, जमीन भी सुधरेगी और किसी भी तरह के खाद की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। इस तरह से किसान आत्म–निर्भर होकर बाजार मुक्त खेती कर सकता है और जहरमुक्त, रसायन मुक्त, स्वादिष्ट और पौष्टिक फसल तैयार कर सकता है।

इस मटका–खाद को सिंचाई–जल के साथ सीधे भूमि में अथवा टपक/ड्रिप सिंचाई (1 मटका प्रति एकड़) से भी दिया जा सकता है।

एक मटका–खाद को 400 लीटर पानी में अच्छे से घोलकर इस विलयन को पौधे के पास जमीन पर देने से अच्छे परिणाम मिलते हैं।

यदि इसी विलयन को सूती कपड़े से छानकर फसलों पर छिड़कते हैं, तो अधिक फूल व फल लगते हैं।

***

सिंचाई–प्रबन्धन (एजीआर/N1205)

सिंचाई:

पौधों की वृद्धि के लिए मृदा में आवश्यक नमी के लिए नियमित अन्तराल पर कृत्रिम रूप से पानी देने की प्रक्रिया को सिंचाई कहते हैं।

सिंचाई के उद्देश्य:

- पौधों की वृद्धि हेतु मृदा में आवश्यक नमी की पूर्ति हेतु।
- फसल को अल्पावधि सूखे से बचाकर उत्पादन सुनिश्चित करने हेतु।
- फसलों को पाले से बचाने हेतु।
- ऊपरी परत को नरम कर उसे कर्षण क्रियाओं के अनुकूल बनाने हेतु।
- मृदा में स्थित लवण के निक्षालन हेतु।

सिंचाई वेफ लिए फसलों की क्रांन्तिक/मुख्य अवस्थाएँ

क्र.स.	फसल	क्रांन्तिक अवस्थाएँ
1.	गेंहूँ	शीर्ष जड़ निकलना, कल्ले फूटान, गाँठ–अवस्था, बालियां–निर्माण, दाने की दूधिया अवस्था व दाना पकने की अवस्था
2.	जौ	बुवाई के 30 दिन बाद, दाने भरते समय
3.	चना, सरसों, अलसी	फूल आने से पहले, फलियाँ बनते समय
4.	आलू	अंकुरण के समय, कन्द बनने का प्रारम्भिक समय
5.	गन्ना	अंकुरण, कल्ले निकलते समय, बड़वार के समय
6.	कपास	डोडे वाली शाखाएँ बनते समय, फूल आते समय, डोडे बनते समय
7.	तम्बाकु	चुटाई के समय
8.	मूँगफली	सूइयां बनने से मूँगफली बनना शुरु होने तक
9.	धान	कल्ले निकलते समय, फूल आने से पहले व फूल आते समय
10.	मक्का	नर मंजरी आते समय, भुट्टे बनते समय

फसल में सिंचाई कितनी बार और कितनी मात्रा में करें:–

किसी फसल में कितनी सिंचाई और एक सिचाई में कितनी जल की मात्रा दी जाये, यह जानना आवश्यक है। किसी भी फसल में जल की मात्रा की आवश्यकता विभिन्न कारकों पर निर्भर करती है। इनमें फसल की किस्म, भूमि की किस्म, बुवाई का समय, जलवायु आदि प्रमुख है। विभिन्न फसलों के लिए सिंचाई की जलमांग अलग–अलग होती है, जो पौधों की क्रांतिक अवस्थाओं के समय सिंचाई पर निर्भर करती है।

विभिन्न फसलों की जल माँग

क्र.स.	फसल	जल माँग (मि.मी.)
1.	धान	900–2500
2.	गेंहूँ	450–650
3.	गन्ना	1500–2500
4.	आलू	500–700
5.	मूँगफली	500–700
6.	कपास	700–1300
7.	मक्का	500–800

फसल में सिंचाई कब करें :–

1. पौधों के आधार पर:

* सिंचाई का समय पौधों में जल की मात्रा या जलविभव मापकर, पौधों में जल की कमी से उत्पन्न लक्षणों को देखकर व पौधों की उचित क्रान्तिक अवस्था जानकर।
* पौधों की बाह्य स्थिति देखकर: प्रातः काल एवं दोपहर के समय खेत में जाकर पौधों का अवलोकन करना चाहिए।
* पौधों की पत्तियों में जलः मात्रा या जल–विभव।
* पत्तियों का तापमान मापकर।
* फसलों की क्रान्तिक अवस्थाओं के आधार पर।

2. मृदा नमी के आधार पर:

मृदा में उपलब्ध जल की ऊपरी सीमा, क्षेत्र–क्षमता तथा निचली सीमा स्थाई म्लानी बिन्दु कहलाती है। इन दोनों के मध्य में मृदा–जल की मात्रा ही पौधों को प्राप्त होती है। इसे प्राप्य जल कहते हैं। वाष्पीकरण व वाष्पोत्सर्जन के कारण धीरे–धीरे मृदा नमी का ह्रास होता रहता है और आस्थाई म्लानी बिन्दु की अवस्था आने लगती है, जिस से पौधों की वृद्धि पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है, इस अवस्था से पूर्व ही फसल में सिंचाई कर देना आवश्यक है।

सिंचाई के प्रकार:

* सतही या प्रष्ठीय सिंचाई।
* भूमिगत या अधोभूमि सिंचाई।
* फुवारा/स्प्रिंकलर/बौछारी सिंचाई।
* टपक/बूँद–बूँदे सिंचाई।

सतही सिंचाई:

प्रष्ठीय सिंचाई विधि में जल सीधे खेत के उपरी भाग में बहने वाली नाली से खेत के कुछ भाग में या पूरे खेत में दिया जाता है। यह मक्का, ज्वार, बाजरा के लिए उपयोगी होती है।

भूमिगत, अवप्रष्टीय या अधोभूमि सिंचाई:

भूमिगत सिंचाई की प्रणाली के अन्तर्गत भूमिगत पाइपलाइन, टाइल–ड्रेन या मोल–ड्रेन का प्रयोग किया जाता है। कुछ स्थानों पर भूमि स्थलाकृति की प्राकृतिक परिस्थितियाँ पौधों की जड़ों में जल की प्रयुक्त भूमि की सतह के नीचे से करने के लिए अनुकूल होती है। इसमे धरातल के नीचे पर एक निश्चित गहराई पर कृत्रिम जल स्तर बनाए रखकर फसल को जल आपूर्ति की जाती है।

फुवारा/स्प्रिंकलर/ बौछारी सिचाईः

इस विधि में नॉजल के द्‌वारा हवा में पानी का स्प्रे किया जाता है। यह विधि सभी फसलों (धान, एवं गन्ने के अलावा) और अधिकांश मृदाओं (भारी मिट्‌टी के अलावा) में उपयोगी है।

स्प्रिंकलर सिंचाई के लाभः

- ★ बौछारी प्रणाली प्रष्ठीय विधियों की अपेक्षा सुगम व सरल है।
- ★ मेड़ न होने से यन्त्रीकरण संभव है।
- ★ समस्त भूमि फसल उगाने के काम आती है, जब कि प्रष्ठीय भूमि का कुछ भाग मेड़ बनाने के काम आता है।
- ★ सिंचाई के साथ उर्वरक भी दिया जा सकता है।
- ★ यह विधि वातावरण में पौधों के द्वारा नमी बनाए रखने में सहायक होती है।
- ★ मृदा पर पपड़ी बनने की समस्या नहीं होती है।
- ★ हल्की व बलुई मृदा में जहाँ बार–बार पानी देना पड़ता है, वहाँ बौछारी विधि अधिक उपयोगी है।

सीमाएँः

- ★ अधिक जल माँगवाली फसलों के लिए उपयुक्त नहीं है।
- ★ छोटे खेतों में अधिक लागत लगती है।
- ★ लवणीय जल के हेतु उपयुक्त नहीं है।
- ★ आरम्भिक खर्च अधिक लगता है।
- ★ पर्याप्त तकनीकी ज्ञान आवश्यक है।
- ★ वायु की गति अधिक होने पर जल–वितरण असमान होकर दक्षता कम होती है।

बूँद–बूँद/टपक सिंचाई :

इस विधि के अन्तर्गत छोटे–छोटे छिद्रों के द्‌वारा पानी बूंद–बूंद कर पौधे की जड़ों में टपकता है। कतार वाली फसलों; फल एवं सब्जी, वृक्ष एवं लता फसलों–हेतु अत्यन्त ही उपयुक्त होती है, जहाँ एक या उससे अधिक निकास को प्रत्येक पौधे तक पहुँचाया जाता है। टपक–सिंचाई को आमतौर से अधिक मूल्य वाली फसलों के लिए अपनाया जाता है; क्योंकि इस सिंचाई–विधि की संस्थापन कीमत अधिक होती है। टपक–सिंचाई का प्रयोग आमतौर से फार्म, व्यावसायिक हरित गृहों तथा आवासीय बगीचों में होता है। टपक सिंचाई लम्बी दूरी वाली फसलों के लिए उपयुक्त होती है। सेब, अंगूर, संतरा, नीम्बू, केला, अमरूद, शहतूत, खजूर, अनार, नारियल, बेर, आम आदि जैसी फल वाली फसलों की सिंचाई टपक–सिंचाई की विधि के द्वारा की जा सकती है।

टपक या बूंद–बूंद सिंचाई के लाभ :

- ★ सिंचाई की यह विधि शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों के लिए अत्यन्त ही उपयुक्त होती है।
- ★ इस सिंचाई विधि में उर्वरकों को घोल रूप में भी प्रदान किया जाता है।
- ★ टपक सिंचाई उन क्षेत्रों के लिए अत्यन्त ही उपयुक्त है, जहाँ जल की कमी होती है।
- ★ जहाँ खेती की जमीन असमतल होती है।
- ★ टपक सिचाई में जल उपयोग दक्षता 95 प्रतिशत तक होती है, जबकि पारम्परिक सिंचाई प्रणाली में जल उपयोग दक्षता लगभग 50 प्रतिशत तक ही होती है।
- ★ इस सिंचाई–विधि से सिंचित फसल की तीव्रवृद्धि होती है, फलस्वरूप फसल शीघ्र परिपक्व होती है।
- ★ टपक सिंचाई–विधि खरपतवार नियन्त्रण में अत्यन्त ही सहायक होती है।
- ★ जल की कमी वाले क्षेत्रों के लिए सिंचाई–विधि अत्यन्त ही लाभकरी होती है।

* टपक सिंचाई में अन्य सिंचाई–विधियों की तुलना में जल प्रयोग दक्षता अधिक होती है।
* इस सिंचाई–विधि में रासायनिक उर्वरकों को घोल रूप में जल के साथ प्रदान किया जा सकता है।
* टपक सिंचाई में जल से फैलने वाले पादप रोगों के फैलने की सम्भावना कम होती है।
* इस सिंचाई–विधि में फसलों की पैदावार 150 प्रतिशत तक बढ़ जाती है।
* पारम्परिक सिंचाई की तुलना में टपक सिंचाई में 70 प्रतिशत तक जल की बचत की जा सकती है।

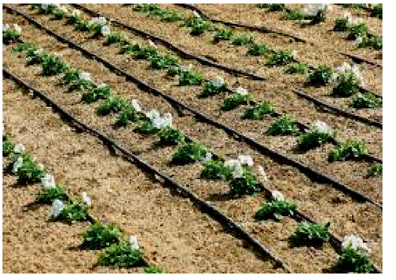

सीमाएँ:

* टपक सिंचाई प्रणाली का आरम्भिक संस्थापन खर्चीला होता है।
* टपक सिंचाई में उपयोग होने वाली पाइपों को चूहों के द्वारा क्षति पहुँचाने का खतरा होता है।
* गाढ़े जल को इस सिंचाई–विधि से उपयोग में नही लाया जा सकता; क्योंकि इससे निकास के जाम होने का खतरा होता है।
* इस सिंचाई–विधि में पादपों के समीप लवण के संचय का खतरा रहता है।

टपक सिंचाई–प्रणाली:

एक आदर्श टपक सिचाई–प्रणाली, पम्प इकाई नियन्त्रक प्रधान एवं उप–प्रधान नली पार्श्विक एवं निकास से बनी होती है। पम्प जलस्त्रोत से जल को लेकर के पाइप–प्रणाली में जल के निकासी के हेतु उचित दबाव बनाती है। नियन्त्रक में कपाट होता है, जो पाईप–प्रणाली में जल की मुक्ति एवं दबाव को नियन्त्रित करता है। इसमें जल की सफाई हेतु छलनी भी होती है। कुछ नियन्त्रक में उर्वरक अथवा पोषक जलकुण्ड भी होता है। यह सिंचाई के दौरान निश्चित मात्रा में उर्वरक को जल में छोड़ता है। अन्य सिंचाई विधियों की तुलना में टपक सिंचाई का यह एक प्रमुख लाभ है। प्रधान नली, उप–प्रधान नली एवं पार्श्विक, नियन्त्रण प्रधान से जल की पूर्ति खेत में करते हैं। प्रधाननली, उप–प्रधान नली एवं पार्श्विक आमतौर से पॉलिथीन की बनी होती हैं, अतः इन्हें प्रत्यक्ष सौर ऊर्जा से नष्ट होने से बचाने के हेतु जमीन में दबाया जाता है। आमतौर से पार्श्विक नलियों का व्यास 13–32 मिलीमीटर होता है। निकास वह युक्ति होती है, जिसका उपयोग पार्श्विक से पौधों को जल की पूर्ति–हेतु नियन्त्रण में किया जाता है।

***

खरपतवार-नियंत्रण (एजीआर/N1204)

जैविक खेती के तहत खरपतवार–नियन्त्रण:

खरपतवार के पौधे एक विशेष स्थिति में अवांछनीय माने जाते हैं, जो कि हमारी फसलों में पाए जाते हैं और फसलों को नुकसान पहुंचाते हैं। खरपतवार को आक्रामक पौधों के रूप में भी जाना जाता है। आवास के आधार पर खरपतवार स्थलीय और जलीय श्रेणियों में विभाजित होते हैं और जीवन की अवधि के आधार पर एकवर्षीय, द्विवर्षीय, बहुवर्षीय में विभाजित होते हैं।

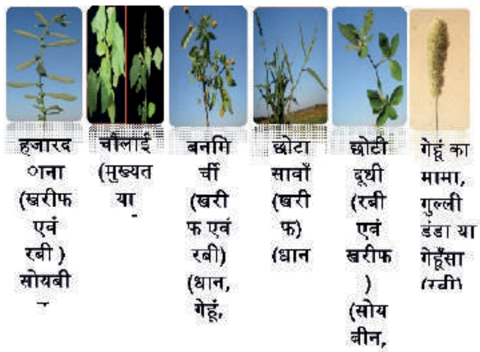

खरपतवार प्रबन्धन एवं खरपतवार की गम्भीर अवधि:

खरपतवार प्रतिस्पर्धा की महत्वपूर्ण अवधि को प्रारम्भिक विकास के बीच की अवधि के रूप में भी परिभाषित किया जाता है, जिसके दौरान फसलों की पैदावार को प्रभावित किए बिना खरपतवार बढ़ सकते हैं और जिस बिन्दु के बाद खरपतवार वृद्धि उपज को प्रभावित नहीं करती है। खरपतवार प्रतियोगिता की महत्वपूर्ण अवधि फसल की अवधि के लगभग 1/3 है।

खरपतवार कैसे रोकें?

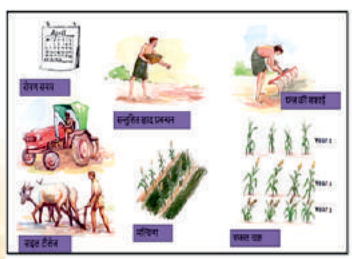

जुताई के समय खरपतवार–नियन्त्रण करना :

किसानों द्वारा खरपतवारों को नियन्त्रित करने के लिए उपयोग की जाने वाली सबसे आम विधि है। जुताई के दौरान खरपतवार–नियन्त्रण के हेतु फसलों को बचाते हुए जुताई करनी चाहिए, जैसे मक्का, सोयाबीन और कपास आदि की खड़ी फसलों में खरपतवार नियन्त्रण के हेतु जुताई करते समय पूरे खरपतवार निकल जाना चाहिए, जिससे फसल को नुकसान न हो। खरपतवार पोषक तत्व, नमी और प्रकाश के लिए फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करता है।

मल्चिंगः

यह पौधे के विकास और कुशल फसल उत्पादन के लिए अधिक अनुकूल परिस्थितिया को बनाने के लिए मिट्टी या जमीन को ढकने की प्रक्रिया या अभ्यास है। मल्च तकनीकी शब्द का मतलब है 'मिट्टी से ढकना'। काली प्लास्टिक शीट सूरज की रोशनी को मिट्टी तक पहुँचनें नहीं देती है। काली शीट के नीचे सूरज की रोशनी की अनुपस्थिति में प्रकाश संश्लेषण नहीं होता है, इसलिए यह खरपतवार वद्धि को रोकता है। उदाहरण के लिए सब्जियों जैसी छोटी अवधि की फसलों के लिए बहुत पतली शीट का उपयोग किया जाता है।

चित्रः मल्चिंग

मशीनीकृत खरपतवार–नियन्त्रण के उपकरण और उनके विभिन्न प्रकार :

पारम्परागत फसल–प्रणाली में समस्याग्रस्त खरपतवारों के नियन्त्रण के लिए खरपतवारनाशी के प्रयोगों के अलावा यान्त्रिक तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है। मशीनीकृत खरपतवार–नियन्त्रण के उपकरणों के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं

एक पहियों वाला हैंड हो

दो पहियों वाला हैंड हो

विभिन्न प्रकार के हाथ से खरपतवार नियंत्रण करने के उपकरण

डायगोनल वीडर

थर्मल वीड कंट्रोल

उपकरण का रखरखावः

खेती में विभिन्न प्रकार के उपकरणों का प्रयोग होता है, इन उपकरणों का समुचित रखरखाव भी जरूरी है, जो निम्नलिखित प्रकार से हैः

1. यन्त्रों को हमेशा साफ़ करके रखना चाहिए।
2. छोटे उपकरणों को धोकर रखना चाहिए, नहीं तो उपकरण जल्दी खराब हो जाएगें।
3. स्प्रेयर के प्रयोग के बाद धोकर रखना चाहिए, नहीं तो यह संदूषित हो जाएंगे।
4. यह सुनिश्चित करें कि यन्त्र अच्छी स्थिति में हो यदि उपयोग के दौरान खराब हो जाएँ तो तुरन्त सुधार कर रखें।

जैविक खेती के तहत एकीकृत नाशी जीव और रोग-प्रबन्धन (एजीआर/N1206)

1. फसल संक्रमण :

रोग जनको (संक्रामक जीव) और पर्यावरण की स्थिति के कारण पौधों में उत्पन्न होने वाले रोगों को संक्रमण कहते है। कवक, जीवाणु, विषाणु, प्रोटोजोआ, सुत्रकृमी और कीट पतंगे आदि संक्रमण के वाहक या कारण हें जो, पौधे के स्वस्थ भाग को खाकर पौधे को संक्रमित कर देते हैं।

2. फसल में बीमारी के लक्षणों की पहचान:

पौधों पर उनकी बीमारियों के लक्षण दिखते हैं जैसे कि पत्तियों के रंग में परिवर्तन, पौधे के आकार में परिवर्तन होना। कवक, जीवाणुओं, विषाणुओं आदि के कारण उत्पन्न हुई बीमारियों के लक्षण एवं उनके उदाहरण जैसे : लीफ रस्ट, सफेद मोल्ड, पाउडर की तरह फफूंदी इत्यादि।

3. पेस्ट:

फसल पर हमला करने वाली किसी भी अंवाछित और विनाशकारी कीट को कीट (पेस्ट) के रूप में जाना जाता है। उदाहरण के तौर पर धान में विभिन्न प्रकार के पेस्ट की पहचान निम्नलिखित प्रकार से कर सकते है:

फसल और कीट घटनाओं के चरणों की पहचान करना:

खेती में कीट और बीमारियों का होना आम बात है। फसल विकास के चरणों और फसल–क्षेत्र में वाहक कीटो (कीट और बीमारियां) के कारण इनके प्रसार एवं घटनाओं पर निर्भर करती है। इसलिए कीट, फसल–विकास चरण के बारे में ज्ञान आवश्यक है। लक्षणों और क्षति की सीमा का निदान किसी भी व्याधि को समझने से पहले पौधों के हिस्सों को समझना जरूरी है कि कौन–सा कीट पौधे के किस भाग पर ज्यादा हमला करता है, इन्हीं लक्षणों के आधार पर हमें विभिन्न प्रकार की व्याधियों के निदान में सुविधा होगी।

किसान के द्वारा विभिन्न प्रकार की फसल उगाई जाती है, जिसमें मुख्यतः धान, मक्का, गेहूँ एवं ज्वार इत्यादि हैं। इन फसलों पर विभिन्न प्रकार के रोग एवं कीट पतंगो का आक्रमण फसलों की विभिन्न अवस्थाओं (पौधा वृद्धि, वानस्पतिक, फूल आने के समय तथा प्रजनन चरण इत्यादि) पर होता है। जैसे धान की वानस्पतिक अवस्था एवं फूल आने के समय क्रमशः टुंग्रो वायरस एवं ब्लास्ट का अतिक्रमण होता है, जिससे फसल को भारी नुकसान होता है। उदाहरण के तौर पर कुछ फसलों में लक्षणों को दर्शाया गया है:

एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धनः

फसल/ पेस्ट	मुख्य अवस्थाएं	लक्षण	चित्र
धान(टुंग्रो वायरस)	सीडलिंग, वनस्पति चरण, टिलरिंग, प्रजनन चरण, दूध आने का समय और पकाना	•पत्तियों का टिप से पीला पड़ना और टिलरिंग में कमी आती है •टुंग्रो वायरस से धान के फसल में देरी से फूल आता है	
मक्का (कॉर्न एफिड)	सीडलिंग, वानस्पतिक, फूल आना, टस्सेलिंग इत्यादि (फसल के किसी नहीं अवस्था में)	•मक्का के बीज का वास्तविक रंग बदल जाता है •परागण में कमी आती है	
ज्वार (सोरघम मिज)	बूटिंग, शीर्षक, फूल आने का समय, अनाज भरना और परिपक्वता	• मिज के द्वारा ज्वार के फ्लोरेट चूसने पर सूख जाते है •मिज के आक्रमण से ज्वार की उपज काम हो जाती है	

फसल/ पेस्ट	मुख्य अवस्थाएं	लक्षण	चित्र
धान (ब्लास्ट)	सीडलिंग, वनस्पति चरण, टिलरिंग, फूल आने का समय, प्रजनन चरण, दूध आने का समय और पकाना	पत्तियों पर घाव छोटे पानी के रूप में शुरू होते हैं जैसे नीले रंग के हरे रंग के टुकड़े, जल्द ही बढ़ते हैं और विशेष रूप से भूरे रंग के केंद्र और काले भूरे रंग के मार्जिन के साथ नाव के आकार के धब्बे बनाते हैं	
गेहूं (करनाल बंट)	सीडलिंग, वनस्पति चरण, टिलरिंग, फूल आने का समय, प्रजनन चरण, दूध आने का समय और पकाना	•गेहूं की बालियाँ और दाने का रंग काला हो जाता है •बीमारी बीजों से पैदा होती है और संक्रमित बीजों की बुवाई प्राथमिक संक्रमण का स्रोत है	
ज्वार (ज्वार का रस्ट)	बूटिंग, शीर्षक, फूल आने का समय, अनाज भरना और परिपक्वता	•पत्ती की दोनों सतहों पर लाल एवं बैंगनी धब्बे के रूप में दिखाई देता है •पत्ती के म्यान और फूलों के डंठल पर भी धब्बे हो सकते हैं।	

फसल / पेस्ट	मुख्य अवस्थाएँ	लक्षण
धान (टुंग्रो वायरस)	सीडलिंग, वनस्पति चरण, टिलरिंग, प्रजनन चरण, दूध आने का समय और पकने के समय।	1. पत्तियों का टिप से पीला पड़ना और टिलरिंग में कमी आती हैं। 2. टुंग्रो वायरस से धान की फसल में देरी से फूल आता है।
मक्का (कॉर्न एफिड)	सीडलिंग, वनस्पति, फूल आना, टससेलिंग इत्यादि (फसल की किसी अवस्था में)	1. मक्का के बीज का वास्तविक रूप बदल जाता है। 2. परागकण में कमी आती है।
ज्वार (सोरघम मिज)	बूटिंग, शीर्षक, फूल आने का समय, अनाज भरना और परिपक्वता।	1. मिज के द्वारा ज्वार के फ्लोरेट चूसने पर सूख जाते हैं। 2. मिज के आक्रमण से ज्वार की उपज कम हो जाती है।

विभिन्न प्रकार के फसल/पेस्ट, उनकी अवस्थाएँ एवं लक्षण

फसल/ पेस्ट	मुख्य अवस्थाएँ	लक्षण
धान (ब्लास्ट)	सीडलिंग, वनस्पति चरण, टिलरिंग, फूल आने का समय, प्रजनन–चरण, दूध आने का समय और पकना।	पत्तियों पर घाव छोटे पानी की बूंदों के रूप में शुरु होते हैं, जैसे नीले रंग के, हरे रंग के धब्बें जल्द ही बढ़ते हैं और विशेष रूप से भूरे रंग के केन्द्र और काले भूरे रंग के किनारों के साथ नाव के आकार के धब्बे बनाते हैं।
गेहूँ (करनाल बंट)	सीडलिंग, वनस्पति–चरण, टिलरिंग, फूल आने का समय, प्रजनन–चरण, दूध आने का समय और पकना।	गेहूँ की बालियों और दाने का रंग काला हो जाता है बीमारी बीजों से पैदा होती है और संक्रमित बीजों की बुवाई प्राथमिक संक्रमण का श्रोत है।
ज्वार (ज्वार का रस्ट)	बूटिंग, शीर्षक, फूल आने का समय, अनाज भरना और परिपक्वता।	पत्ती की दोनों सतहों पर लाल एवं बैंगनी धब्बे के रूप में दिखाई देता है पत्ती के किनारों और फूलों के डंठल पर भी धब्बे हो सकते हैं।

एकीकृत नाशी जीव प्रबन्धन एक ऐसी व्यवस्था है, जिसमें फसलों को हानिकारक कीडों तथा बीमारियों से बचाने के लिए किसानों को एक से अधिक तरीकों को, जैसे व्यावहारिक, यान्त्रिक, जैविक तथा रासायनिक नियन्त्रण, इस तरह से क्रमानुसार प्रयोग में लाना चाहिए ताकि फसलों को हानि पहुँचाने वालों की संख्या आर्थिक हानिस्तर से नीचे रहे और जैव–रासायनिक दवाईयों का प्रयोग तभी किया जाए, जब अन्य अपनाए गये तरीकों से सफल न हो। नाशी जीवों के नियन्त्रण की सस्ती और वृहद आधारवाली विधि है, जो नाशी जीवों के नियन्त्रण की सभी विधियों के समुचित तालमेल पर आधारित है। इसका लक्ष्य नाशी जीवों की संख्या एक सीमा के नीचे बनाए रखना है। इस सीमा को 'आर्थिक क्षति सीमा' कहते हैं।

आई.पी.एम. उद्देश्य :

1. फसल की बुवाई से लेकर कटाई तक हानिकारक कीड़ों, बीमारियों तथा उनके प्राकृतिक शत्रुओं की लगातार एवं व्यवस्थित निगरानी रखना।
2. कीडों एवं बीमारियों को उनके आर्थिक हानि स्तर से नीचे रखने के लिए सभी उपलब्ध नियन्त्रण विधियों जैसे व्यावहारिक, यान्त्रिक, अनुवांशिक, जैविक, संगरोध व रासायनिक नियन्त्रण का उपयोग करना।
3. कीडों एवं बीमारियों के आर्थिक हानि स्तर (ई.टी.एल.) को पार कर लेने पर सुरक्षित कीटनाशकों को सही समय पर सही मात्रा में प्रयोग करना।
4. कृषि–उत्पादन में कम लागत लगाकर अधिक लाभ प्राप्त करना तथा साथ–साथ वातावरण को प्रदूषण से बचाना।

आई.पी.एम. क्यों?

1 दिन प्रतिदिन फसलों में रसायनों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है, जिसके कारण रासायनों के अवशेषों की मात्रा भी वातावरण में बढ़ती जा रही है, जिससे मनुष्य तथा अन्य प्राणियों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है और कई प्रकार की बीमारियाँ जन्म ले रही हैं।

2. फसलों को हानि पहुँचाने वाले कीड़ों को मारने वाले कीडे वातावरण में हमेशा मौजूद रहते हैं, जिससे हानिकारक तथा लाभदायक कीडों का प्राकृतिक सन्तुलन हमेशा बना रहता है और फसलों को कोई आर्थिक हानि नहीं पहुँचती। लेकिन रासायनिक दवाईयों के प्रयोग से मित्र कीड़े मर जाते है क्योंकि वे प्रायः फसल की ऊपरी सतह पर शत्रु कीडों की खोज में रहते हैं और कीटनाशकों के सीधे सम्पर्क में आ जाते हैं, जिससे प्राकृतिक सन्तुलन बिगड़ जाता हैं। इसका परिणाम यह होता है कि जो कीड़े अब तक आर्थिक हानि पहुँचाने की क्षमता नहीं रखते थे अर्थात् उनकी संख्या कम थी, वे भी नुकसान पहुँचाना शुरु कर देते हैं।

3. रासायनिक दवाईयों के प्रयोग से किसानों का फसल–उत्पादन का खर्च बढ़ जाता है, जिससे किसानों के लाभ में काफी कमी हो जाती है। रसायनों के दुष्प्रभावों को ध्यान में रखते हुए किसानों के लिए आई.पी.एम. विधि अपनाना अनिवार्य है।

आई.पी.एम. कैसे?

बीज के चयन तथा बीजाई से लेकर फसल की कटाई तक विभिन्न विधियाँ, जो प्रयोग के समयानुसार एवं क्रमानुसार आई.पी.एम.विधि में अपनाई जाती हैं, इस प्रकार हैं–

1. व्यवहारिक नियन्त्रण
2. यान्त्रिक नियन्त्रण
3. आनुवांशिक नियन्त्रण
4. संगरोध नियन्त्रण
5. जैविक नियन्त्रण

1. व्यवहारिक नियन्त्रणः व्यवहारिक नियन्त्रण से तात्पर्य है कि परम्परागत कृषि–क्रियाओं में ऐसा क्या परिवर्तन लाया जाए, जिससे कीड़ों तथा बीमारियों से होने वाले आक्रमण को या तो रोका जाए या कम किया जाए।

- खेतों से फसल के अवशेषों को हटाना तथा मेढ़ों को साफ रखना।
- गहरी जुताई करके उसमें मौजूद कीड़ों तथा बीमारियों की विभिन्न अवस्थाओं तथा खरपतवारों को नष्ट करना।
- खाद तथा अन्य तत्वों की मात्रा के निर्धारण के लिए मिट्टी परीक्षण करवाना।
- साफ, उपयुक्त एवं प्रतिरोधी किस्मों का चयन करना तथा बोने से पहले बीजोपचार करना।
- उचित बीज दर एवं पौध–अन्तरण।
- पौधारोपण से पहले पौधें की जड़ो को जैविक फफूंदीनाशक ट्राइकोर्डमा बिरडी से उपचारित करना।
- फसल बोने और काटने का समय इस तरह सुनिश्चित करना ताकि फसल कीड़ों तथा बीमारियों के प्रकोप से बच सके।
- पौधों की सही सघनता रखें ताकि पौधे स्वस्थ रहें।
- समुचित जल–प्रबन्धन।

2. यान्त्रिक नियन्त्रणः

इस विधि को फसल रोपाई के बाद अपनाना आवश्यक है। इसके अन्तर्गत निम्न तरीके अपनाए जाते हैं

- कीड़ों के अण्ड़समूहों, सूडियों, प्यूपों तथा वयस्कों को इकट्ठा करके नष्ट रखना।
- रोगग्रस्त पौधों या उनके भागों को नष्ट करना।
- खेत में बांस के पिंजरे लगाना तथा उनमें कीड़ों के अण्ड–समूहों को इकट्ठा करके रखना ताकि मित्र कीटों का संरक्षण तथा हानिकारक कीटों का नाश किया जा सके।

* प्रकाश प्रपंच की सहायता से रात को कीड़ों को आकर्षित करना तथा उन्हें नष्ट करना।
* कीड़ों की निगरानी व उनको आकर्षित करने के लिए फेरॉमोन ट्रैप का प्रयोग करना तथा आकर्षित कीड़ों को नष्ट करना।
* हानिकारक कीट सफेद मक्खी के नियन्त्रण के लिए यलो स्टीकी ट्रैप का प्रयोग करें।

3. आनुवांशिक नियन्त्रण: इस विधि में नर कीटों में प्रयोगशाला में या तो रासायनों से या फिर रेडिऐशन तकनीकी से नपुंसकता पैदा की जाती है और फिर उन्हें काफी मात्रा में वातावरण में छोड़ दिया जाता है ताकि वे वातावरण में पाए जाने वाले नर कीटों के साथ प्रतिस्पर्धा कर सके। लेकिन यह विधि द्वीप समूहों में ही सफल पाई जाती है।

4. संगरोध–नियन्त्रण: इस विधि में सरकार के द्वारा प्रचलित कानूनों को सख्ती से प्रयोग में लाया जाता है, जिसके तहत कोई भी मनुष्य कीट या बीमारी ग्रस्त पौधों को एक स्थान से दूसरे स्थानों को नहीं ले जा सकता। यह दो तरह का होता है जैसे घरेलू तथा विदेश संगरोध।

5. जैव नियन्त्रण: फसलों के नाशी जीवों को नियन्त्रित करने के लिए प्राकृतिक शत्रुओं को प्रयोग में लाना जैव नियन्त्रण कहलाता है।

नाशीजीव: फसलों को हानि पहुँचानें वाले जीव नाशीजीव कहलाते हैं। प्राकृतिक शत्रु: प्रकृति में मौजूद फसलों के नाशी जीवों को हानी पहुँचाने वाले हानिकारक जीवों को खाते हैं, जिन्हें 'प्राकृतिक शत्रु', 'मित्र जीव', 'मित्र कीट', 'किसानों के मित्र', 'जैव एजेंट' आदि नामों से जाने जाते हैं। जैव नियन्त्रण एकीकृत नाशी जीव प्रबन्धन का महत्वपूर्ण अंग है।

इस विधि में नाशी जीव व उसके प्राकृतिक शत्रुओं के जीवनचक्र, भोजन, मानव सहित अन्य जीवों पर प्रभाव आदि का गहन अध्ययन करके प्रबन्धन का निर्णय लिया जाता है।

जैव नियन्त्रण के लाभ:

* जैव नियन्त्रण अपनाने से पर्यावरण दूषित नहीं होता है।
* प्राकृतिक होने के कारण इसका असर लम्बे समय तक बना रहता है।
* अपने आप बढ़ने (गुणन) तथा अपने आप फैलने के कारण इसका प्रयोग घनी तथा ऊँची फसलों जैसे गन्ना, फलदार पौधों, जंगलों आदि में आसानी से किया जा सकता है।
* केवल विशिष्ट नाशी जीवों पर ही आक्रमण होता है, अतः अन्य जीव–प्रजातियों, कीटों, पशुओं, वनस्पतियों व मानव पर इसका कोई प्रभाव नहीं होता है।

फसल–कटाई (एजीआर/N1207)

फसल की कटाई के उपयुक्त तरीके एवं विधियाँ:

फसल की कटाई उसके प्रकार पर निर्भर करती है। सभी फसलों की कटाई तरीके अलग–अलग हैं, जैसे कि छोटे क्षेत्र की कटाई मजदूरों के द्वारा की जा सकती है, बड़े क्षेत्र की कटाई मशीनों के द्वारा की जाती है। सब्जियों एवं फलों को हाथों के द्वारा तोड़ा जाता है।

फसल की कटाई के दौरान सम्भावित मिश्रण की पहचान:

फसल की कटाई के दौरान फसल के साथ खरपतवार के बीज, मिट्टी, छोटे पत्थर/कंकड़ आदि मिश्रित हो जाते हैं, अतः फसल की कटाई के समय फसल के अलावा कोई अन्य सामग्री मिश्रित नहीं होनी चाहिए अन्यथा इससे फसल संक्रमित हो जाती है।

फसल की कटाई का उचित चरण एवं समय:

फसल की कटाई उस समय की जाती है, जब फसल पूर्ण रूप से परिपक्व हो जाए। अधपकी एवं अधिक पकी हुई फसल को नहीं काटना चाहिए, इससे फसल की गुणवत्ता प्रभावित होती है।

बाजार की मांग एवं दूरी के आधार पर फसलों की कटाई:

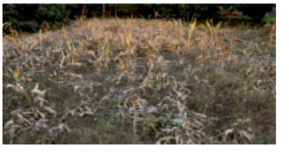

कम दूरी के बाजार के लिए फसल की कटाई या तुड़ाई परिपक्वता में की जाती है और अधिक दूरी के बाजार के लिए फसल को अर्द्धपरिपक्वता की अवस्था में तोड़ा जाता है। फल एवं सब्जियों की तुड़ाई बाजार की मांग के अनुसार की जाती है।

फसल के भण्डारण के लिए आदर्श तापमान, नमी, भण्डारण के दौरान व्यवस्थित धूमकेतु–प्रणालियाँ, ठण्डे भण्डारण गृह की सुविधा का उपयोग :

- ✶ फसल–भण्डारण के लिए फसलों को उचित नमी पर ही भण्डारित करना चाहिए।
- ✶ भंण्डारण के दौरान व्यवस्थित धूमकेतु–प्रणालियों में जैव–कीटनाशकों एवं जैविक रूप से प्रमाणित रसायनों का ही प्रयोग किया जाता है।
- ✶ फसल की गुणवत्ता बनाए रखने एवं फसल को लम्बे समय तक सुरक्षित रखने के लिए फसलों को ठण्डे भण्डारण गृह में भण्डारित करना चाहिए।

क्रेताओं की आवश्यकता के अनुसार फसल की पैकिंग :

फसल के सुरक्षित प्रबन्धन के लिए तैयार फसल को सही तरह से पैकिंग करना आवश्यक है। फसलों को विभिन्न तरीकों से पैक किया जाता है। जैसे कार्ड बोर्ड के डिब्बे में, लकड़ी के बक्सों में, प्लास्टिक केरेट्स इत्यादि में क्रेताओं की आवश्यकता के अनुसार पैक किया जाता है। फसलों की उनके आकार के आधार पर पैकिंग की जाती है।

क्रेताओं की मांग के अनुसार जैविक उपज का परिवहन किया जाता है। जल्दी खराब होने वाली फसलों को सही समय

फसल का विपणन एवं फसल बाजार दर:

तैयार फसल का अच्छा भाव प्राप्त करने के लिए फसलों को उनके आकार, रंग एवं गुणवत्ता के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। संक्रमण रहित फसलों को ही बाजार में अच्छा मूल्य प्राप्त होता है।

विभिन्न फसलों के लिए कटाई और फसल की कटाई के बाद अनुसूची की योजना और आयोजन:

फसलों को उनके सही परिपक्वता–काल में काटा जाता है, जिससे कि लम्बे समय तक उनकी गुणवत्ता बनी रहे। फसल की कटाई के बाद अच्छा बाजार मूल्य प्राप्त करने एवं गुणवत्ता बनाए रखने के लिए उसका सही तरह से वर्गीकरण, पैकिंग, परिवहन, भण्डारण अति आवश्यक है।

वर्गीकरण और पैकेजिंग के उत्पादन के लिए आवश्यक सामग्री और उपकरणों की निगरानी और रख रखाव:

वर्गीकरण के लिए आवश्यक सामग्री, जैसे ग्रेडिंग मशीन, मजदूरों के लिए हाथों के दस्ताने आदि संक्रमित नहीं होने चाहिए। पैकिंग पदार्थ जैसे कार्ड बोर्ड के डिब्बे, लकड़ी के बक्से, जूट के बोरे आदि को अच्छे से रखना चाहिए। वे फसल को पैक करते समय संक्रमित नहीं होने चाहिए।

जैविक प्रमाणन एवं गुणवत्ता आश्वासन (एजीआर/N1208)

जैविक खेती प्रमुखतया निम्न सिद्धान्तों पर आधारित है:

1. विश्व को जैविक खेती भारत की देन है।
2. जैविक खेती चूँकि अधिक बाह्य आदान के उपयोग पर आश्रित नहीं है और इसके पोषण के लिये जल की अनावश्यक मात्रा भी जरूरी नहीं है, इस कारण यह प्रकृति के सबसे नजदीक और प्रकृति ही इसका आधार है।
3. पूरी विधा प्राकृतिक प्रक्रियाओं के सामंजस्य व उनके एक–दूसरे पर आधारित होने के कारण इससे न तो मृदा जनित तत्त्वों का दोहन होता है और न ही मृदा की उर्वरता का ह्रास होता है।
4. पूरी प्रक्रिया में मिट्टी एक जीवन्त अंश है।
5. मृदा में रहनेवाले सभी जीवरूप इसकी उर्वरता के प्रमुख अंश हैं और सतत उर्वरता के संरक्षण में योगदान करते हैं। अतः इनकी सुरक्षा व पोषण किसी भी कीमत पर आवश्यक है।
6. पूरी प्रक्रिया में मृदा–पर्यावरण संरक्षण सबसे महत्त्वपूर्ण है।

जैविक प्रमाणीकरण:

जैविक प्रमाणीकरण की प्रक्रिया में जैविक खाद्य उत्पादकों की प्रसंस्करण इकाइयों तथा जैविक कृषि–उत्पादन के क्रिया–कलापों का एक निश्चित कार्यक्रम के तहत निश्चित मानकों की अनुपालना सुनिश्चित कर उत्पाद का प्रमाणीकरण किया जाता है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत कोई भी व्यवसाय जैविक खाद्य उत्पादन व उसके विपणन से जुड़ा हो उसका प्रमाणीकरण किया जा सकता है; जैसे किसान फसल–उत्पादन, बीज–उत्पादन व विपणन, खाद्य प्रसंस्करण, खुदरा बिक्री तथा होटल इत्यादि। विभिन्न देशों में इस कार्यक्रम की अलग–अलग आवश्यकताएँ हो सकती हैं; परन्तु सामान्यतया फसल–उत्पादन, भण्डारण, प्रसंस्करण, पैकेजिंग तथा परिवहन इसके प्रमुख अंग हैं और प्रक्रिया की प्रमुख आवश्यकताएँ हैं।

1. संश्लेषित रसायनों; जैसे रासायनिक खाद, कीटनाशी, प्रतिजैविक तथा खाद्य योजक इत्यादि तथा परिवर्तित अनुवांशिक जीवों के प्रयोग का निषेध हैं।
2. रसायन व रसायन के अवशेषों से मुक्त खेतों का प्रयोग (जहाँ कई वर्षों से किसी भी रसायन का प्रयोग न किया गया हो)।
3. उत्पादन व विपणन–प्रक्रिया का विस्तृत उल्लेखन।
4. जैविक उत्पाद व जैविक प्रक्रिया को अजैविक उत्पाद व प्रक्रिया से बिल्कुल अलग कर रखना।
5. समय पर उत्पादन इकाइयों का निरीक्षण, कुछ दोषों में पूरी प्रमाणीकरण प्रक्रिया सरकार के द्वारा चलाई जाती है और "जैविक" शब्द का प्रयोग कानूनी प्रक्रियाओं के अधीन नियन्त्रित है। जैविक प्रमाणीकरण आवश्यकताओं के अतिरिक्त सभी प्रमाणीकृत उत्पादों को सामान्य खाद्य सुरक्षा कानून तथा अन्य ऐसी वाँछित नियमन प्रक्रियाओं, जो अप्रमाणीकृत उत्पादों के लिए आवश्यक हैं, उनकी भी पूर्णरूप से अनुपालना जरूरी है।

प्रमाणीकरण की आवश्यकताः

जैविक प्रमाणीकरण से विश्व में जैविक खाद्यों की बढ़ती माँग में गुणवत्ता सुनिश्चित करने तथा धोखाधड़ी व बेईमानी की रोकथाम में सहायक है। उत्पादकों के लिए जहाँ प्रमाणीकरण स्वीकृत उत्पादनों व उनके विपणनकर्त्ताओं की पहचान करता है, वहीं उपभोक्ताओं को उत्पाद की गुणवत्ता की गारंटी देता है। जैविक प्रमाणीकरण उत्पाद की विशिष्ट जैविक गुणवत्ता का वैसा ही आश्वासन है, जैसा कि अन्य प्रमाणीकरण जैसे ''कम वसायुक्त'', 100 प्रतिशत गेहूँ उत्पाद'' या ''रासायनिक योजकों से मुक्त'' इत्यादि प्रदान करते हैं।

जैविक प्रमाणीकरण का प्रमुख उद्देश्य उपभोक्ताओं को बाजार में उच्च गुणवत्ता के जैविक उत्पादों की गारंटी देना है। विभिन्न प्रमाणीकरण संस्थाओं के अपने अलग–अलग चिन्ह है और इन चिन्हों के उत्पाद पैकिटों पर प्रयोग से उन उत्पादों की गुण–विश्वसनीयता बढ़ती है और उनकी बिक्री सुगम हो जाती है। सामान्यतया प्रमाणीकरण संस्थाएं उस दोष में प्रचलित व स्वीकृत जैविक कार्यक्रम तथा जैविक मानकों के अनुरूप प्रमाणीकरण का कार्य करती हैं।

जैविक प्रमाणीकरण हेतु आवेदन करने की विधि :

उत्पादक जो स्वेच्छा से जैविक विधि द्वारा अपने फार्म पर उत्पादन लेना चाहता है या ले रहा है, वह जैविक प्रमाणीकरण प्रक्रिया में भाग लेने के लिये संस्थान में पंजीकरण करवा सकता है। फसल उत्पादन के लिये वह

1. एकल जैविक उत्पादक
2. समूह जैविक उत्पादक

के रूप में संस्थान के प्रमाणीकरण के लिये आवेदन कर सकता है। दोनों वर्गों यथा एकल उत्पादक व समूह उत्पादक के लिये आवेदन प्रारूप वेबसाईट पर उपलब्ध है।

एकल जैविक उत्पादक के लिए आवश्यक योग्यता व दस्तावेज :

1. आगामी वर्ष भर की फसल योजना का ब्यौरा (प्रारूप) वेबसाईट पर उपलब्ध है।
2. चयनित जैविक फार्म की भूमि के दस्तावेज की फोटोकॉपी।
3. पंजीकरण आवेदक के पेन कार्ड की फोटो प्रति।
4. फार्म का नक्शा पड़ोस की गतिविधियों का उल्लेख करते हुये।
5. जैविक विधि से उत्पादन लेने की कृत संकल्पना व इसका जैविक प्रमाणीकरण संस्था के साथ अनुबन्ध।
6. चयनित फार्म का उतराक्षं व अंक्षाश यदि रिकार्ड किया जा सकता हो, अगर भूमि लीज पर ली गई है, तो लीज पेपर और अगर परिवार सदस्यों की है तो सदस्य से सहमति पत्र।

जैविक समूह उत्पादक के लिये आवश्यक योग्यता व दस्तावेजः

1. छोटी जोत वाले ऐसे जैविक कृषक जिनकी कृषि योग्य जैविक भूमि 4 हैक्टेयर से कम हो, खेतों में भौगोलिक सन्निकटता हो तथा करीब करीब समान तरह की फसल का उत्पादन कृषि भूमि पर हो व राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम के मानदण्डों के दिशा निर्देशों के अनुपालन करने में सहमत हों, वे समूह गठन कर आवेदन कर सकते हैं। समूह के संचालन के लिये समूह आन्तरिक नियन्त्रण–प्रणाली का गठन करेगा।
2. समूह में कम से कम 25 व अधिकतम 500 जैविक कृषक शामिल हों।
3. आवेदन के साथ जैविक कृषकों की अनुमोदित सूची।
4. वर्ष भर की समूह सदस्यों की फसल योजना वेबसाईट पर उपलब्ध है।
5. समूह के आन्तरिक नियन्त्रण–प्रणाली का प्रमाणीकरण संस्था के साथ अनुबन्ध।
6. आन्तरिक नियन्त्रण–प्रणाली का मेनुअल (कार्यकारिणी व कार्य प्रणाली का विवरण)
7. आन्तरिक नियन्त्रण–प्रणाली या प्रबन्धक का पैन नं., टैन नं. की फोटो प्रति।
8. समूह–योजना के फार्मों की स्थिति व नक्शा।
9. आन्तरिक निरीक्षण चैक लिस्ट् का प्रारूप।
10. कृषक–फार्म डायरी का प्रारूप।

जैविक प्रमाणीकरण के चरण :

1. **आवेदनः** जैविक प्रमाणीकरण के हेतु एकल कृषक स्वयं या समूह के रूप में प्रमाणीकरण के लिए आन्तरिक नियन्त्रण–प्रणाली या कार्यप्रदाता संस्था के द्वारा पृथक–पृथक आवेदन पत्र में प्रमाणीकरण–संस्था को आवेदन कर सकते हैं।
2. **अनुबन्धः** आवेदन के साथ अथवा कार्यप्रदाता संस्था को प्रमाणीकरण संस्था के साथ पारस्परिक हितों का ध्यान रखते हुए अनुबन्ध करना होता है। प्रमाणीकरण–हेतु पंजीकरण से पूर्व एकल कृषकों का कृषक–समूह से राज्य जैविक प्रमाणीकरण संस्था के द्वारा अनुबन्ध करवाया जाता है। जिसकी शर्त आवश्यकतानुसार समय–समय पर परिवर्तनीय है।
3. **प्रमाणीकरण शुल्कः** जैविक प्रमाणीकरण–हेतु आवेदन व अनुबन्ध की सन्तुष्टि के बाद प्रमाणीकरण–शुल्क अग्रिम राशि के रूप में जैविक प्रमाणीकरण संस्था को जमा करवाना होता है।
4. **पंजीकरणः** पूर्णतः भरे हुए आवेदन पत्र व अन्य दस्तावेज जैसे अनुबन्ध का जैविक सिस्टम प्लान जैविक क्षेत्र में मौसमवार फसलों एवं उनके उत्पादन कार्यों के विवरण सहित एवं निर्धारित शुल्क रसीद के पश्चात् इन सभी दस्तावेजों की जांच की जाती है तथा आवेदन कर्ता का पंजीकरण किया जाता है। शुल्क आवेदनकर्ता को प्रतिवर्ष पंजीकरण की वैधता की समाप्ति से पूर्व पुनः नवीनीकरण–आवेदन पत्र के साथ जमा करवाना होता है।
5. **क्षेत्रनिरीक्षणः** पंजीकरण सुनिश्चित होने के बाद एकल कृषक व कृषक समूह के संदर्भ में आन्तरिक नियन्त्रण–प्रणाली के आन्तरिक निरीक्षकों के द्वारा समूह के 100 प्रतिशत जैविक कृषकों के निरीक्षण के बाद एवं उन आन्तरिक निरीक्षण प्रपत्रों की प्रतिलिपि प्रमाणीकरण–संस्था में भिजवाने के पश्चात् प्रमाणीकरण–संस्था के निरीक्षकों के द्वारा कुछ चयनित कृषकों का निरीक्षण किया जाता है। एकल कृषक के पंजीकृत जैविक क्षेत्र में कृषि के हेतु अपनायी जा रहीं समस्त क्रियाविधियाँ (बीज, जैविक खाद, जैव उर्वरक, जैविक कीट व रोगनाशक, बफरजोन, उपकरण, प्रसंस्करण, भण्डारण, विक्रय सम्बन्धित दस्तावेज आदि) एवं उपलब्ध संसाधनों व कृषक–द्वारा कृषक–डायरी में किये जा रहे संधारण की जाँच की जाती है। इसी प्रकार कृषक–समूह के निरीक्षण के समय चयनित कृषकों के पंजीकरण–क्षेत्र कृषक–द्वारा मौसमवार लगायी गयी फसलों का विवरण, फसल–उत्पादन में उपयोग किये गये बाहरी व आन्तरिक आदानों का विवरण, कृषक के पास उपलब्ध संसाधनों, कृषक–डायरी की पूर्तियों, आन्तरिक नियन्त्रित प्रणाली के दस्तावेजीकरण की जाँच व आन्तरिक निरीक्षक का एक साक्षी निरीक्षण भी किया जाता है तथा कृषक–समूह व आन्तरिक नियन्त्रण–प्रणाली, संस्था की कार्यप्रणाली की संक्षिप्त रिपोर्ट बाह्य निरीक्षण जाँच प्रपंत्रों के साथ मूल्यांकन–हेतु प्रमाणीकरण–संस्था के कार्यालय में जमा करवायी जाती है।
6. **मूल्यांकनः** जैविक क्षेत्र के बाह्य निरीक्षण के पश्चात प्रमाणीकरण–संस्था के कार्यालय के निरीक्षक के द्वारा जमा करवायी गयी जाँच प्रपत्रों का मूल्यांकन अधिकारी के द्वारा किया जाता है तथा कृषक के द्वारा अपनायी गयी जैविक विधियों की अनुपालना व अवहेलना एवं उनके स्तर के सम्बन्ध में टिप्पणी तैयार की जाती है। कृषक के द्वारा जैविक विधियों की अवहेलनाओं का स्तर दो प्रकार का होता है।

1 **प्रमुख वृहत् अवहेलनाएँ**

2 **प्रमुख सूक्ष्म अवहेलनाएँ**

7. **प्रमाणीकरण शुल्कः** जैविक प्रमाणीकरण के हेतु आवेदन व अनुबन्ध की सन्तुष्टि के बाद प्रमाणीकरण–शुल्क अग्रिम राशि के रूप में जैविक प्रमाणीकरण संस्था को जमा करवाना होता है।
8. **अनुशंसाः** मूल्यांकन अधिकारी के द्वारा तैयार रिपोर्ट का परीक्षण जैविक प्रमाणीकरण के अधिकारी के द्वारा किया जाता है तथा एन.जी.ओ.पी. के नियमानुसार उचित अनुशंसा प्रमाणीकरण–समिति को भिजवायी जाती है।
9. **अवहेलना–पत्र जारी करनाः** क्षेत्र–निरीक्षण के दौरान पायी गयी अवहेलनाओं के हेतु कृषक आई.सी.एस. को एक अवहेलना–पत्र जारी किया जाता है, जिसमें दी गयी अवहेलनाओं की पूर्ति प्रमाणीकरण–संस्था के द्वारा दी गयी
10. **अवहेलनाओं की पूर्तिः** प्रमाणीकरण–संस्था के द्वारा जारी अवहेलनाओं की पूर्ति के पश्चात् संस्था को कृषक आई.सी.ए. के द्वारा अवहेलना–पूर्तिप्रपत्र भिजवाया जाता है, जिसकी जाँच व अनुपालना होने की सुनिश्चितता प्रमाणीकरण–संस्था के अधिकारियों के द्वारा अगली बार निरीक्षण के समय की जाती है।

11. **प्रमाणीकरण–समिति की बैठकः** अवहेलना की पूर्ति की सूचना संस्था को प्राप्त होने पर प्रमाणीकरण–समिति की बैठक आमन्त्रित की जाती है, जिसमें कृषक के पंजीकृत क्षेत्र के प्रमाणीकरण स्तर का निर्णय लिया जाता है। यदि अवहेलनाओं का स्तर निरन्तर ज्यादा की श्रेणी में आने व उनकी अनुपालन नहीं होने पर पंजीकरण निरस्त किया जा सकता है अथवा समूह प्रमाणीकरण की स्थिति में इस कृषक को समूह से निष्कासित भी किया जा सकता है या उसके रूपान्तरण वर्ष की अवधि एक वर्ष बढ़ा दी जाती है, जिसकी सूचना कृषक को प्रेषित की जाती है।
12. **स्कोप प्रमाणपत्र जारी करनाः** प्रमाणीकरण–समिति की बैठक में लिये गये निर्णय के अनुसार ट्रेसनेट सॉफ्टवेयर के द्वारा एकल कृषक–कृषक समूह का स्कोप प्रमाण पत्र जारी किया जाता है। जिसमें कृषक व उसके जैविक क्षेत्र की सम्पूर्ण जानकारी के साथ उगायी गयी फसलों व जैविक क्षेत्र में प्रमाणीकरण स्तर का विवरण होता है।
13. **ट्रॉजेक्सन प्रमाणपत्र जारी करनाः** एकल कृषक–कृषक समूह को जारी किये गये स्कोप प्रमाण–पत्र में से किसी उत्पादन का विपणता अगर घरेलू बाजार में निर्यात किया जाता है, तो उत्पादक उत्पाद का नाम, मात्रा, क्रयकर्ता का नाम, रसीद, परिवहन की रसीद इत्यादि का पूरा विवरण प्रमाणीकरण–संस्था का ट्रेसनेट के माध्यम से स्वयं या डाक–द्वारा उपलब्ध कराकर आवेदन करेगा, तो उसे ट्रांजेक्शन प्रमाण–पत्र उस विक्रय–सामग्री का उपलब्ध करवाया जाएगा।
14. **अपीलः** यदि किसी कारण से प्रमाणीकरण को स्वीकृति नहीं दी जाती एवं जैविक किसान सन्तुष्ट नहीं हो, तो यह अपील कर सकता है। अपील करने के हेतु निर्धारित प्रपत्रा में अपील के शुल्क सहित आवेदन किया जा सकता है। जैविक कृषक का आवेदन अपील कमेटी के समक्ष पूर्ण दस्तावेजों के साथ प्रस्तुत किया जाता है। अपील कमेटी के निर्णयानुसार कार्यवाही की जाती है तथा आवेदनकर्ता को यथानुसार निर्णय की जानकारी दी जाती है।

कृषक समूह जैविक प्रमाणीकरणः

राष्ट्रीय जैविक उत्पादन–कार्यक्रम के अन्तर्गत छोटे एवं मझोले कृषकों के लिए कृषक समूह जैविक प्रमाणीकरण योजना लागू की गयी है। संस्था के द्वारा निम्न वैधानिक रूप से पंजीकृत समूहों को जैविक प्रमाणीकरण की सुविधा प्रदान की जाती है।

- कृषक समूह
- स्वयं सहायता समूह परियोजना
- निर्यातक
- सरकारी, गैरसरकारी कृषक संगठन
- सोसायटी
- कम्पनी
- ट्रस्ट

उपरोक्त समूहों के द्वारा आन्तरिक नियन्त्रण–प्रणाली के अन्तर्गत राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम के नियमानुसार उदेश्य एवं कार्यप्रणाली का विवेचन करते हुए आन्तरिक जैविक मानकों, जोखिम घटकों तथा आन्तरिक निरीक्षण एवं समूह के कार्मिकों एवं कृषकों के हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम को विधिवत् रूप से लागू करना होता हैं। इस विधि से कम लागत में सम्पूर्ण कृषक समूह का प्रमाणीकरण सम्भव हो पाता है तथा समूह के कृषकों के उत्पादों का परिवहन, प्रसंस्करण एवं विपणन में भी सुविधा होती है।

प्रमाणीकरण प्रक्रियाः

प्रमाणीकरण–प्रक्रिया या किसान व उसके क्षेत्रा पर प्रमाणीकरण–प्रक्रिया पद

1. किसान के द्वारा जैविक प्रबन्धन अपनाने का निर्णय तथा पी.जी. एस. प्रमाणीकरण–प्रक्रिया से जुड़ने की सहमति।
2. पढ़कर व सुनकर जैविक मानकों का ज्ञान। उचित समझ व जानकारी समूह की गोष्ठियों में भाग लेकर सुनिश्चित की जा सकती है। फार्म व पशुधन–प्रबन्धन में सभी प्रकार के रसायनों के उपयोग पर प्रतिबन्ध।

पी.जी.एस. चिन्ह विशिष्ट चिन्ह विशिष्ट प्रमाणीकरण पहचान कोड देना। प्रादेशिक परिषद के द्वारा प्रमाणीकरण–स्वीकृति प्राप्त होने पर स्थानीय समूह सभी सदस्यों के अलग–अलग प्रमाण–पत्र वेबसाइट के माध्यम से छाप सकता है तथा अपने उत्पादों के पैकेट या उनके थैलों पर स्वीकृत पी.जी.एस. चिन्ह लगाकर उनका विपणन कर सकता है। प्रत्येक किसान के प्रमाण–पत्र में एक विशिष्ट पहचान कोड अंकित होगा, जिसमें उस समूह व सम्बन्धित प्रादेशिक परिषद् की पहचान निहित होगी। प्रत्येक प्रमाण–पत्र में उस किसान की कुल जोत, ली गयी फसलों व प्रमाणित उत्पादों का विवरण भी परिशिष्टरूप में अंकित होगा। विभिन्न उत्पादों की कितनी मात्रा का उत्पादन व प्रमाणीकरण किया गया है, इसकी जानकारी पी.जी.एस. इण्डिया वेबसाइट पर उपलब्ध होगी। प्रत्येक प्रमाण–पत्र निर्णय की स्वीकृति की तिथि से 12 माह तक प्रभावी होगा। अगली सारांश सीट जमा करने और निर्णय–स्वीकृति के बाद नया प्रमाण–पत्र जारी किया जाएगा, जिसकी वैधता जारी करने की तिथि से 12 माह तक होगी। इस प्रकार हर बार सारांश सीट जमा करने व प्रमाणीकरण निर्णय स्वीकृत होने पर प्रमाणीकरण की वैधता निरन्तर आगे बढती रहेगी।

पी.जी.एस. जैविक तथा पी. जैविक तथा पी.जी.ए. परिवर्तन अधीन उत्पादों–हेतु परिवर्तन अधीन उत्पादों–हेतु अलग–अलग चिन्ह हैं। पी.जी.एस–इण्डिया प्रणाली में पूर्ण पी.जी. एस.–जैविक व पी.जी. एस. परिवर्तन अधीन उत्पादों पर निम्नानुसार अलग–अलग चिन्ह लगाए जाएंगे।

तश्तीय पक्ष प्रमाणीकरण प्रक्रिया विश्व जैविक बाजार की सबसे अधिक मान्य प्रतिभूति (गारंटी) प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के प्रचलन व प्रमाणीकरण हेतु भारत में 20 प्रमाणीकरण संस्थाएँ कार्यरत हैं। तश्तीय पक्ष प्रमाणीकरण विश्व बाजार में सर्वाधिक मान्य प्रक्रिया है।

PGS-INDIA GREEN

PGS-INDIA ORGANIC

***

जैविक खेती व्यवसाय (एजीआर/N1209)

जैविक खेती का व्यवसाय शुरु करें

जैविक खेती में लागत और राजस्व के रुझानों को समझें :

व्यक्ति जैविक खेती में लागत और राजस्व मौजूदा रुझानों को समझने में सक्षम होना चाहिए। वह जैविक व्यापार की मौजूदा बाजार–मात्रा, चरणों में जैविक खेती की लागत, भूमि–तैयारी, प्रमाणीकरण, बीज, श्रम, गोबर की खाद (एफ. वाई. एम.), जैव उर्वरक, सिंचाई, खरपतवार, कटाई, भण्डारण और परिवहन सहित इनपुट की लागत को समझने में सक्षम होना चाहिए।

एक चरणबद्ध(जैविक खेती योजना के लागत लाभ विश्लेषण को समझें):

व्यक्ति परम्परागत खेती पर जैविक खेती के लाभों को समझने में सक्षम होना चाहिए।

लाभ वित्तीय और अप्रत्यक्ष पारिस्थितिक तन्त्र स्वास्थ्य से सम्बन्धित है। जैविक खेती के विषय में खेती की लागत सिन्थेटिक रासायनिक उर्वरकों और जहरीले रसायनों के बजाय बायोफर्टिलाइजर्स, गोबर की खाद (एफ. वाई. एम.) आदि के उपयोग के कारण पारम्परिक खेती से कम है।

जैविक खेती के लिए उपलब्ध सरकारी सब्सिडी और लाभों को समझें :

जैविक खेती में कृषि की लागत 25 प्रतिशत तक कम हो जाती है और उत्पाद प्रीमियम मूल्य पर बेचा जाता है। भारत सरकार सतत् कृषि के लिए राष्ट्रीय मिशन के तहत जैव उर्वरक विनिर्माण इकाई की स्थापना के लिए किसानों को 100 प्रतिशत सहायता प्रदान कर रही है। पी. के. वी. वाई. के तहत, रु. 20,000/– सहायता जैविक खेती के आरम्भ से 3 वर्ष तक प्रदान की जा रही है। बाजारों में जैविक उपज के परिवहन के लिए 50 एकड़ के प्रति समूह रु. 1,20,000/– परिवहन सहायता प्रदान की जा रही है।

सहायक जैविक विपणन की गतिविधियों को प्रेरित करने के लिए किराया और श्रम–शुल्क, घटना के प्रबन्धन के खर्चों को पूरा करने के लिए एक जैविक मेले को व्यवस्थित करने के लिए प्रति क्लस्टर रु. 36330/– रुपये की सहायता की पेशकश की जा रही है।

उत्तरपूर्व और हिमालयी क्षेत्र के लिए एन. एच. एम. के तहत वर्मी–कम्पोस्टिंग

इकाई की स्थापना के लिए 50 प्रतिशत सब्सिडी और जैविक खेती को अनुकूलित करने के लिए प्रत्येक लाभार्थी को रु. 30000/– की पेशकश की जा रही है।

जैविक उपज और योजना के अनुसार योजना–बाजार की खुफियाँ जानकारी और स्थानीय मांग बनाम निर्यात उन्मुख रणनीति को समझे :

उपयोगकर्ता के पास बाजार की खुफियाँ जानकारी और जैविक उपज की मांग होनी चाहिए। वैश्विक बाजारों से सम्बन्धित विकास के अलावा घरेलू बाजार वैश्विक औसत से अधिक की दर से बढ़ रहे हैं और 2020 तक 25 प्रतिशत सीएजीआर में विकास की उम्मीद है। जैविक उपज की 80 प्रतिशत खपत मेट्रो शहरों में है, जबकि उत्पादन इन शहरों से दूर स्थित ग्रामीण इलाकों में है। इसलिए जैविक उपज की विपणन लागत अधिक है। इसके समाधानों में से एक, किसानों और विपणन/प्रसंस्करण फर्मों के बीच पूर्व निधारित कीमतों पर समझोते में प्रवेश करके अनुबन्ध खेती है। अधिक एकीकृत अपूर्ति श्रृंखलाओं और उत्पाद की पहुँच बाजार के बड़े हिस्से के कारण अनुबन्ध खेती फायदेमन्द है।

गुणवत्ता और पैकिंग में उपभोक्ताओं की पसन्द को समझें:

जैविक उत्पादक की गुणवत्ता और पैकिंग के मामले में जैविक उत्पादक को ग्राहक की पसन्द को समझना चाहिए। अधिकांश ग्राहक पॉलीथीन बैग और टिन के बजाय जूट और सूती बैग या हस्त निर्मित पेपर डिब्बे में पैक किए गये उत्पाद को पसन्द करते है और इन दिनों बायोडिग्रेडेबल पैकेजिंग सामग्री बाजार में भी उपलब्ध है। भारत सरकार सहायता प्रदान करके अच्छी गुणवत्तावाले पैकेजिंग को भी बढ़ावा दे रहा है।

अपनी शक्ति को समझें और उस पर ध्यान केन्द्रित करें और खेत के स्तर के मूल्यवर्धन को शामिल करें:

जैविक उत्पादक को संसाधनों के सम्बन्धित अपनी ताकते समझनी चाहिए जैसे; कृषि जलवायु क्षेत्रा के अनुसार अपनी भूमि के लिए फसल की उपयुत्तफता। उन्हें अपनी भूमि में फसलों को विकसित करने की योजना तैयार करनी चाहिए ताकि उन्हें अधिकतम रिटर्न मिल सके। आमतौर पर कीट हमले की जांच के लिए बफर जोन बनाने के साथ मिश्रित खेती और रसायनों के प्रदूषण और अप्रयुक्त भूमि (मेंढ इत्यादि) में अल्पकालिक फलियाँ फसल बढ़ने से मिट्टी में पोषण के साथ–साथ आर्थिक रिटर्न के मामले में मूल्यवृद्धि होती है।

किसान–समूहों द्वारा सामूहिक विपणन उपक्रम:

जैविक उपज के मामले में परिवहन की लागत अधिक है, क्योंकि उपज ग्रामीण इलाकों से सुदूर ले जाई जाती है और मांग वाले शहरी बाजार सम दूरी पर है। किसानों के समूहों से उपज का संग्रह आर्थिक रूप से पहुँचाया जा सकता है। दूध–संग्रह बिन्दुओं के मामले में अमूल ने एक उत्कृष्ट उदाहरण स्थापित किया है। कई बाजार श्रृंखला इस मॉडल का अनुसरण कर रहे हैं। किसानों के लिए समूहों से उपज इकट्ठा करने वाला उत्पादक मध्यस्थों को दूर रखने में सफल रहा है।

जैविक उपज के ब्राडिंग फायदें को समझें:

किसी भी उपज की ब्रांडिंग मांग को बनाता है और उपज की गुणवत्ता के लिए प्रामाणिकता स्थापित करता है। लम्बे समय तक ब्रांडिंग अधिक लाभ और उच्च राजस्व प्राप्त कराती है। जैविक मेलों और लगातार गुणवत्ता रखरखाव वाले विज्ञापनों के माध्यम से ब्रांडिंग जैविक उत्पादक समूहों तक ग्राहक की पहुँच को बेहतर बनाता है।

जैविक उपज की बाह्य और ऑनलाईन बिक्री के लिए प्रमुख चैनलों की पहचान करें और खुदरा श्रृंखला और थोक खरीदारों के साथ नेटवर्किंग बनायें रखें।

जैविक उत्पादक जैविक उपज की बिक्री के लिए प्रमुख चैनलों की पहचान करने में सक्षम होना चाहिए। भारतीय जैविक खाद्य बाजार में जबरदस्त वृद्धि के साथ कई निवेशकों ने जैविक खाद्य कम्पनियों में निवेश करना शुरु कर दिया है। कई जैविक स्टार्टअप में निवेशकों का ध्यान आकर्षित किया है और जैविक उपज की नई श्रेणियों में विस्तार कर रहे हैं। आर्गेनिक इण्डिया, आईक्यूर आर्गेनिक जैसी कम्पनियों के मेट्रो शहरों में अपने स्टोर है। आई फॉर आर्गेनिक का ऑनलाईन फल और सब्जी स्टोर एन. सी. आर. क्षेत्रा में 10,000 परिवारों तक पहुँच के साथ प्रतिदिन 5 टन उत्पादन बेचता है।

उपभोक्ताओं के साथ सीधा सम्पर्क बनायें:

निर्माता को सीधे ग्राहक से कनेक्ट करने के लिए सुझाव दिया जाता है। किसान हालांकि हमेशा शहरी ग्राहक से जुड़ने के लिए झिझकता था और बिचौलियों ने किसान के इस झिझक का लाभ उठाया। लेकिन अब स्मार्ट जैविक उत्पादक सीधे उपभोक्ता से जुड़ता है। ग्राहक भी मध्यस्थों की तुलना में उत्पादक पर भरोसा करता है। क्योंकि मध्यस्त प्रसंस्करण के दौरान मिलावट में शामिल होते हैं। ग्राहक किसान को यह जानकर सौंपा जाता है कि उत्पादक मिलावट नहीं करता है और खुशी से प्रीमियम मूल्य का भुगतान करता है।

ऑनलाईन बाजार सूचना उपकरणों का प्रयोग करें:

स्मार्टफोन के माध्यम से इंटरनेट कनेक्टिविटी दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुँच गयी हैं। एक जैविक उत्पादक हमेशा अपने फोन पर इंटरनेट कनेक्टिविटी का उपयोग कर जैविक बाजार की मांग और मूल्य अर्थशास्त्र ऑनलाईन पर अद्यतन रख सकता है।

एसईसी सेगमेंटेशन और स्थानीय हाट्स के आयोजन आधार पर उपभोक्ता को लक्षित करें:

एक जैविक उत्पादक को सामाजिक–आर्थिक वर्गीकरण के माध्यम से उपभोक्ता को लक्षित करना होगा। एक अच्छा उद्यमी उपभोक्ता को क्रय–शक्ति के अनुसार वर्गीकृत करता है। और फिर ग्राहक को लक्षित करता है। जैविक उत्पादकों को यह पहचानने की आवश्यकता है कि उनका ग्राहक स्वास्थ्य चेतना और अच्छी क्रय–शक्ति के साथ मेट्रो या मिनी मेट्रो शहरों से है। उसका ग्राहक ऑनलाईन और सुपर मार्केट से खरीदता है। स्वस्थ भोजन के लाभों के बारे में जागरुकता बढ़ाने के दौरान, उत्पादक अधिक उत्पादकों को प्रेरित करने और साथ ही साथ अपने समूह का विस्तार करने के लिए स्थानीय स्तर पर जैविक मेलों को व्यवस्थित कर सकता है।

प्रकाशन साहित्य और अभियान जारी करें और जैविक खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता और लाभों पर जानकारी प्रदान करें:

जैविक उत्पादक को प्रचार साहित्य जारी करना होगा और अपने समूह के उपज के विपणन में सुधार के लिए अभियानों को व्यवस्थित करना होगा किसी भी व्यवसाय में विपणन और विज्ञापन बहुत महत्वपूर्ण हिस्सा है।

जैविक खेती के मामले में विशिष्ट कृषि–जलवायु की स्थिति के तहत उत्पादन के कारण अतिरिक्त सामान्यरूप से अच्छी गुणवत्ता के लिए किसी विशेष भौगोलिक स्थान से जैविक उपज की ट्रेसिबिलिटी और विशिष्टता की सराहना की जाती है। जैसे जम्मू का जैविक बासमती चावल विश्व प्रसिद्ध है, अमरावती का अनार, सिन्धु दुर्ग से अल्फांसो, नागपुर के सन्तरे, कूर्ग की कॉफी विशिष्टरूप से अच्छी गुणवत्ता के लिए विश्वस्तर पर जाने जाते हैं।

गुणवत्ता प्रक्रियाओं और दस्तावेजों का प्रदर्शन करें:

जैविक उत्पादक को पी. जी. एस. के मामले में एजेन्सी या किसानों के समूह को प्रमाणित करके प्रमाणीकरण और निरीक्षण प्राप्त करना होता है। इसके अलावा उसे इनपुट के आवेदन को रिकार्ड करना होगा। ये रिकार्ड वह यह सुनिश्चित करने के लिए उपभोक्ता को दिखा सकता है कि उसका उत्पादन प्रामाणिक रूप से जैविक है।

लम्बे समय तक क्षेत्र में उपस्थित रखें उपभोक्ताओं को नियमित आपूर्ति के लिए पूंजीकरण करने के लिए कहें और बाक्स में साप्ताहिक आपूर्ति के लिए एक प्रणाली बनाएँ:

किसी भी व्यवसायिक प्रतिष्ठान को एक ही स्थान से लम्बी अवधि के लिए गुणवत्ता बनाये रखने से ग्राहकों के बीच विश्वास कायम हो जाता है। लम्बे समय तक क्षेत्र में मौजूदगी भरोसा सुनिश्चित करती है और उत्पादक के जैविक व्यवसाय को स्थापित करती है। उत्पादक नियमित व्यवसाय के लिए नियमित ग्राहकों को पंजीकृत करने में सक्षम होना चाहिए। यह सम्बन्ध स्थाई ग्राहकों में और अधिक विश्वास सुनिश्चित करता है। साथ ही अच्छा रिटर्न सुनिश्चित होता है।

***

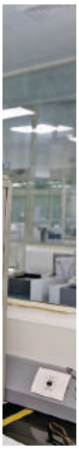

क्रियान्वयन एजेंसी
पतंजलि बायो रिसर्च इंस्टिटयूट
पतंजलि फूड एंड हर्बल पार्क
पदार्था लक्सर रोड यूनिट –III,
हरिद्वार, उत्तराखण्ड – 249404

Implementing Agency
PATANJALI BIO RESEARCH INSTITUTE
Patanjali Food and Herbal Park
Padartha Laksar Road (Unit - III)
Haridwar, Uttarakhand - 249404